संस्कृत प्रचार पुस्तकमाला संख्या १

संस्कृत शिक्षा के सम्बन्ध में

(देश के मूर्धन्य मनीषियों के विचार)

A collection of ideas and opinions of some eminent Scholars, Educationists, Scientists, Justices, Politicians, and Leaders Regarding the Utility and Necessity of Compulsory Study of Sanskrit Language and Literature.

सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय
वा रा ण सी

संस्कृत-शिक्षा के सम्बन्ध में

देश के मूर्धन्य मनीषियों के विचार

★

सम्पादक—

श्री वासुदेव द्विवेदी, वेदशास्त्री, साहित्याचार्य

[सम्पादक—संस्कृत प्रचार पुस्तकमाला]

★

सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय

वा रा ण सी

आवश्यक निवेदन

सन् १९५० में कार्यालय द्वारा एक पुस्तक प्रकाशित की गई थी जिसमें देश-विदेश के अनेक विख्यात मनीषियों तथा देश के सभी मूर्धन्य नेताओं के संस्कृत-सम्बन्धी विचार संकलित किये गये थे। उक्त पुस्तक के समाप्त हो जाने पर तथा बार-बार उसकी माँग होने पर वही पुस्तक परिवर्तित तथा परिवर्धित रूप में पुनः प्रकाशित की जा रही है।

इन विचारों के बार-बार प्रकाशन का एकमात्र उद्देश्य यही है कि जो भारतीय शिक्षित जन तथा विशेषकर वे अधिकारी, समाजसेवी तथा लोकनायक जो अज्ञान, उदासीनता, उपेक्षा, सम्पर्क का अभाव अथवा विदेशी भाषा एवं संस्कृति के प्रभाव से अभिभूत होने के कारण संस्कृत-शिक्षा के लाभों का यथार्थरूप में मूल्याङ्कन नहीं कर सके हैं, उन्हें इसके मूल्य एवं महत्ता से परिचित कराया जाय तथा इसके सम्बन्ध में अपने उत्तरदायित्व के निर्वाह के प्रति भी उन्हें आकृष्ट किया जाय।

यद्यपि एक दृष्टि से इस पुस्तक के प्रकाशन की कोई विशेष महत्ता नहीं है। क्योंकि जिस देश में अनेक शताब्दियों तक संस्कृत राष्ट्रभाषा रही हो, जहाँ का सारा साहित्य संस्कृतमय हो, जहाँ के निवासियों के समस्त धार्मिक क्रिया-कलाप संस्कृत में होते हों, जहाँ की सभ्यता एवं संस्कृति की पवित्र धारा संस्कृत के स्रोतों से प्रवाहित होती हो और जहाँ की भाषाओं का अब भी पोषण तथा सम्वर्धन संस्कृत से होता हो और इस प्रकार जिसका समग्र भारतीय जीवन से अच्छेद्य-अभेद्य सम्बन्ध हो वहीं के निवासियों को संस्कृत का महत्त्व समझाने के लिये प्रयत्न करना एक हास्यास्पद बात प्रतीत होती हैं। यह उसी प्रकार अशोभनीय भी मालूम पड़ता है जैसे किसी पुत्र को उसकी माता का महत्त्व समझाया जाय।

परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आज संस्कृत की वही स्थिति है जो किसी पुत्र द्वारा विस्मृत एवं उपेक्षित माता की होती है। क्योंकि संस्कृत का राष्ट्र के साथ जितना घनिष्ठ सम्बन्ध है और प्रस्तुत पुस्तक के उल्लिखित विचारों में इसका जितना महत्त्व स्वीकृत किया गया है, जिसे मैं यहाँ विस्तारभय से उद्धृत नहीं करना चाहता, उसके अनुरूप आज

भी देश की शिक्षापद्धति में संस्कृत को स्थान नहीं दिया गया है और वह कहीं उपेक्षित, कहीं अपमानित, कहीं अव्यवस्थित और कहीं बहिष्कृत के रूप में जीवन बिता रही है।

इधर त्रिभाषायोजना के अनुसार तो वह पूरे देश से ही बहिष्कृत हो चुकी थी और संविधान के अनुसार यदि उसे हिन्दीभाषी प्रदेशों में तृतीय भाषा के रूप में कुछ जीवित रहने की आशा भी थी तो वह लखनऊ में ५ दिसम्बर के केन्द्रीय शिक्षामन्त्री श्री छागला के वक्तव्य से बिलकुल समाप्त हो गई। उनके इस वक्तव्य के बाद देश में गम्भीर प्रतिक्रिया हुई और उत्तर तथा दक्षिण दोनों ओर से इसका विरोध हुआ। उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री श्री चन्द्रभानु गुप्त जी ने श्री छागला के वक्तव्य की वैधानिकता का प्रतिवाद किया। श्री डा० सम्पूर्णानन्द, श्री मुन्शी जी, श्री अनन्त शयनं आयङ्गार तथा श्री डा० राघवन् आदि अनेक मूर्धन्य मनीषियों ने भी त्रिभाषायोजना में संस्कृत को रखने के लिये मार्मिक वक्तव्य प्रकाशित किये। डा० सम्पूर्णानन्द जी ने तो दिल्ली में जाकर प्रधानमन्त्री श्री शास्त्रीजी से संस्कृत रक्षा की भिक्षा तक माँगी। इस कार्यालय की ओर से भी गत १६ सितम्बर को काशी में एक विराट संस्कृत रक्षा सम्मेलन कर संस्कृत को किसी भी रूप में शिक्षण में स्थान देने के लिये प्रस्ताव पारित किये गये और सभी अधिकारियों के पास भेजे गये। इस पुस्तक का प्रकाशन भी इस अवसर पर इसीलिये आरम्भ किया गया कि इन विचारों के प्रचार से भी कदाचित् संस्कृत के अनुकूल वातावरण बन सके। इस प्रकार के प्रयत्न अनेक क्षेत्रों से चलते रहे फिर भी विश्वास यही था कि संस्कृत की शिक्षा पूरे देश से समाप्त हो जायगी। परन्तु पाकिस्तान के साथ युद्ध छिड़ जाने के कारण संयोगवश यह विषय लोक-सभा में विचारार्थ नहीं आ सका और शीघ्र आने की सम्भावना भी नहीं रही। फिर भी संस्कृत के हटाये जाने की आशंका तो थी ही। परन्तु प्रसन्नता की बात है कि सम्भवतः देशव्यापी विरोध के कारण श्री छागला महोदय ने अपने विचारों में परिवर्तन कर दिया है और गत २० नवम्बर की केन्द्रीय संस्कृत बोर्ड की बैठक में त्रिभाषायोजना में संस्कृत को स्थान देने का औचित्य स्वीकार किया है जिसके लिये वे सभी संस्कृत प्रेमियों के लिये धन्यवाद के पात्र हैं।

किन्तु इस वक्तव्यमात्र से सन्तोष कर निश्चिन्त बैठ जाना ठीक न होगा। क्यों कि बड़े संकोच के साथ इस तथ्य को भी स्वीकार करना पड़ता है कि मन्त्रियों के वक्तव्य बहुधा भिन्न-भिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न प्रकार के हो जाया करते हैं। स्वयं श्री छागला जैसे वरिष्ठ व्यक्ति के भी लखनऊ और दिल्ली के वक्तव्यों में काफी अन्तर हो गया है। इधर ३१ जनवरी को वाराणसी में केन्द्रीय उपशिक्षामन्त्री श्री भक्तदर्शन जी से मालूम हुआ कि यह प्रश्न सभी राज्यों के पास विचारार्थ भेजा गया है। उनके भी उत्तरों को देखकर इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय होगा। अब भिन्न-भिन्न राज्यों के क्या विचार होंगे और उनका केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल पर क्या प्रभाव पड़ेगा इस सम्बन्ध में कुछ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता और संस्कृत की स्थिति पुनः संकटापन्न ही रह जाती है। इधर एक नूतन समाचार यह प्राप्त हुआ है कि गत २५ फरवरी को डा० कर्ण सिंह जी की अध्यक्षता में केन्द्रीय संस्कृत बोर्ड ने भारत सरकार से यह सिफारिस की है कि अहिन्दीभाषी क्षेत्रों में हिन्दी के साथ तथा हिन्दीभाषी क्षेत्रों में किसी भी आधुनिक भारतीय भाषा के साथ संस्कृत की शिक्षा सम्मिलित कर दी जाय और दोनों भाषाओं के प्रश्नपत्रों को ५०-५० नम्बर के अधार पर विभाजित किया जाय। यद्यपि यह निर्णय भी बहुत सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता फिर भी यदि भारत सरकार इतना भी स्वीकार कर ले तो वर्तमान परिस्थिति में इसे संस्कृत का सौभाग्य ही माना जायगा। परन्तु यह कितने दुःख का विषय है कि देश की शिक्षा, संस्कृति, सदाचार, एवं एकता के एकमात्र आधारभूमि इस संस्कृत शिक्षा के सम्बन्ध में इस प्रकार की अस्थिरता हो, उसकी अर्हता के सम्बन्ध में प्रदेशों से अभी पूछ-ताछ की जाय और उसके लिए इतनी सिफारिस करनी पड़े!

ऐसी स्थिति में देश के संस्कृत-संस्कृति प्रेमी नागरिकों तथा शिक्षा विशारदों का यह कर्तव्य है कि वे अब संस्कृत के साथ अधिक अन्याय न होने दें और राष्ट्रहित की दृष्टि से ही सदा के लिये देश की शिक्षापद्धति में संस्कृत को अनिवार्य स्थान देने के लिये राज्यों तथा केन्द्र को बाध्य करें और सामान्य जनता को भी, जो बहुत दिनों से संस्कृत का सम्बन्ध छूट जाने के कारण इसके लाभ से वञ्चित है, पुनः संस्कृत के पठन-पाठन तथा प्रचार-प्रसार के लिये उद्‌बुद्ध करें।

इसीलिये हमने यह आवश्यक समझा कि एक बार पुनः यह पुस्तक प्रकाशित की जाय और जनता, जननायकों तथा सरकार के वरिष्ठ सञ्चालकों

को भी संस्कृत की गरिमा और उपयोगिता से अवगत कराकर उन्हें इसके प्रति उचित व्यवहार करने की प्रेरणा दी जाय।

इसी दृष्टि से हमने अपनी प्रथम पुस्तक में प्रकाशित विचारों के अतिरिक्त और भी अनेक महत्त्वपूर्ण विचारों को इधर-उधर से संकलित किया और कुछ गण्य-मान्य विचारकों के पास अनुरोधपत्र भेजकर भी उनके विचार प्राप्त किये। यद्यपि पत्र तो अधिक संख्या में भेजे गये परन्तु उत्तर बहुत थोड़े ही प्राप्त हुए। कुछ सज्जनों ने तो अभी तक कुछ उत्तर ही नहीं दिया। कुछ सज्जनों ने इस आन्दोलन के प्रति अपनी सहानुभूति प्रगट की, कुछ ने चिन्ता व्यक्त की, कुछ लोगों ने इस सम्बन्ध में कुछ लिखने में असमर्थता प्रगट की और कतिपय सज्जनों ने विलम्ब से उत्तर भेजने की सूचना भेजी। परन्तु सभी उत्तरों की प्रतीक्षा में अधिक विलम्ब होते देख हमने पुस्तक को इसी रूप में प्रकाशित कर देना उचित समझा जो पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन का उद्देश्य मैं ऊपर बतला चुका हूँ। देश के सर्वसाधारण नागरिक तथा विशेषकर शिक्षित समाज से हमारा साग्रह अनुरोध है कि वे इसमें प्रकाशित समस्त विचारों को आद्योपान्त पढ़ें, उनका मनन करें तथा यदि ये विचार बुद्धिग्राह्य प्रतीत हों तो इन्हें कार्यरूप में परिणत कराने के लिये अपने-अपने स्थान में सभायें करें, जोरदार शब्दों में प्रस्ताव पारित करें तथा उन्हें केन्द्र एवं राज्य सरकारों के पास भेजकर उन्हें संस्कृत को सम्मानपूर्ण स्थान देने के लिये सावधान करें।

साथ ही जिन विचारकों ने संस्कृत शिक्षा की अनिवार्यता को आवश्यक बतलाया है और सौभाग्यवश वे इस समय भी जीवित हैं, उनसे भी हमारा सानुरोध निवेदन है कि वे एक बार विचार प्रगट करके ही चुपचाप न बैठे प्रत्युत उसे चरितार्थ कराने के लिये कुछ सक्रिय रूप में भी प्रयत्न करने का कष्ट करें।

अन्त में हम उन समस्त महानुभावों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रगट करना चाहते हैं जिन्होंने अपने मूल्यवान् विचारों को भेजने की कृपा की और जिन्होंने आर्थिक सहायता देकर इन विचारों को जनता के समक्ष रखने का मुझे अवसर प्रदान किया।

३० फरवरी १९६६
वाराणसी

विनीत
सम्पादक

५

विषय-सूची

★

संस्कृत-शिक्षा के सम्बन्ध में

देश के मूर्धन्य मनीषियों के विचार

यामृषयो मन्त्रकृतो मनीषिण:
अन्वैच्छन् देवास्तपसा श्रमेण।
तां देवीं वाचं हविषा यजामहे
सा नो दधातु सुकृतस्य लोके ॥
—तैत्तिरीय ब्राह्मण, ११-८-८

स्वामी विवेकानन्द

The ideas must be taught in the language of the people; and at the same time Sanskrit education must go on alone with it, because the very sound of Sanskrit words gives a prestige and a power and a strength to the race. The attempts of the great Ramanuja and of Chaitanya and of Kabir to raise the lower classes of India, show that the marvellous results were attained during the life time of those great prophets; yet the latter's failures have to be explained ... ... the secret is here ... ... they had all the wish that these lower classes should come up, but they did not apply their energies to the spreading of Sanskrit language among the masses. Even the great Buddha made one false step when he stopped the Sanskrit language from being studied by the masses.

Complete Works Vol. III.
Page 290

महात्मा गान्धी

संस्कृत हमारी भाषा के लिए गंगा नदी है। मुझे लगता रहता है कि यदि वह सूख जाय तो भाषायें निर्माल्य बन जायेंगी।

× × × ×

संस्कृत एक ऐसी भाषा है जिसमें भारतीय संस्कृति का चिरसंचित ज्ञान भरा है। विना संस्कृत पढ़े कोई अपने को पूर्ण भारतीय और विद्वान नहीं बना सकता।

× × × ×

संस्कृत देवभाषा है, अतः इसके अध्ययन और स्वाध्याय से मनुष्य अपने में देवोपम गुणों का विकास कर सकता है।

× × × ×

संस्कृत में सद्ग्रंथ ही अधिक संख्या में हैं, उनके विमर्श का भाग्य जिन्हें प्राप्त है वे धन्य हैं।

× × × ×

जो अच्छी हिन्दी, बङ्गाली, गुजराती या मराठी सीखना चाहें उन्हें संस्कृत तो सीखनी ही पड़ेगी।

गान्धीजी की सूक्तियां
पृष्ठ ११४

मुझे तो यह पश्चात्ताप होता है कि मैं अधिक संस्कृत न सीख सका। क्योंकि आगे चलकर मैंने समझा कि किसी भी हिन्दू वालक को संस्कृत का अच्छा अभ्यास किये विना नहीं रहना चाहिए।

आत्मकथा पृष्ठ २७

महामना मालवीयजी—

मुझे यह कहने की विशेष आवश्यकता प्रतीत नहीं होती कि उपरोक्त नियमावली में संस्कृत को क्यों प्रथम स्थान दिया गया। हमें अपनी उज्वल वंशपरम्परा तथा प्राचीन पैतृक मर्यादा का अभिमान है। हमारी पैतृक सम्पत्तियों में से सबसे बहुमूल्य रत्न हमारी संस्कृत भाषा है। इसी में हमारा पवित्र साहित्य धार्मिक तत्त्वज्ञान और सभी प्रकार की प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति के सुन्दर अङ्ग-प्रत्यङ्ग पूर्णतया सुरक्षित हैं। प्रत्येक मनुष्य अपना व्यक्तिगत, शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक तथा चरित्रसम्बन्धी उन्नति किस प्रकार कर सकता है तथा फिर कैसे अपने को एक शक्तिशाली समाज में सङ्गठित कर सकता है, इसका पूर्ण विवेचन हमें इसी भाषा में मिलता

है। भाषा की उत्तमता के विचार से भाषामर्मज्ञों ने संसार की सभी भाषाओं में संस्कृत को ही प्रथम स्थान दिया है। मनुष्य के चिन्तित तथा उत्कृष्ट विचारों को सुमधुर ललित शैली में व्यक्त करने की यह सदैव ही सुन्दर माध्यम रही है।

श्री मालवीय जीवन चरित,
द्वितीय भाग पृ० ४६

कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर

भारतवर्षेर चिरकालेर ये चित्त सेटार आश्रय संस्कृत भाषाय। एई भाषार तीर्थपद दिये आमरा देशेर चिन्मय प्रकृतिर स्पर्श पाव, ताके अन्तरे ग्रहण करव, शिक्षार एई लक्ष्य आमार मने दृढ़ छिल। इंग्रेजी भाषा दिये नाना ज्ञातव्य विषय आमरा जानते पारि, सेगुलि अत्यन्त प्रयोजनीय। किन्तु संस्कृत भाषार ये एक आनन्द आछे, से रञ्जित करे आमादेर मनेर आकाश के, तार मध्ये आछे एकटा गम्भीर वाणी, विश्व प्रकृतिर मतोई से आमादेर शक्ति देय एवं चिन्ता के मर्यादा दिये थाके।

आश्रमेर रूप ओ विकास (बङ्गला) पृ० ४५

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन

हिन्दी में पुष्टि-सौन्दर्य एवं भावाभिव्यक्ति लाने के लिए संस्कृत का ज्ञान आवश्यक ही नहीं परमावश्यक (अनिवार्य) है।

अ० भा० संस्कृत परिषद्, लखनऊ
विवरण पुस्तिका, २ मई १९५४

आचार्य विनोवा भावे

I have studied a good many languages and literature of the world. But no language of the world other than Sanskrit contains literature which with supreme confidence and faith declares to man—तत् त्वम् असि thou art that. This spiritual lore is our strength. Herein lies the distinctive glory of India. India is "the best country in the world". For the only reason that here there is the ancient spiritual lore.

Bhavana's Journal, October 1964.

मैंने बहुत दफा कहा है कि जैसे दो आंखों से मनुष्य देखता है, वैसे ही दो भाषाओं की—प्रान्तीय भाषा और राष्ट्रभाषा, दोनों की राष्ट्र को आवश्यकता हैं। इसलिये मैंने दो भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य माना। तीसरी आंख की जरूरत हुई—भगवान शंकर को तीसरी आंख थी—जो ज्ञान दृष्टि कहलाती है—तो संस्कृत भाषा का अध्ययन लाभदायक होगा और चश्मे के स्थान पर अंग्रेजी भाषा हमारे काम में आयेगी।

भाषा का प्रश्न पृ० २४

श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद

संस्कृत वाङ्मय भारत की ही क्यों सारी मनुष्य जाति के लिये अमूल्य निधि है। उसकी प्राचीनता, उसकी व्यापकता, उसकी विशदता, उसकी सौन्दर्य और मधुरता सभी तो ऐसी हैं जिनसे न केवल मानव की आज तक की संस्कृति का सारा इतिहास ज्योतिर्मय हो उठता है वरन् मानव का हृदय आनन्द से विभोर हो जाता है और उसको एक ऐसे नये आदर्श लोक की झाँकी मिल जाती है जिसमें पहुंचने पर ही उसका जीवन सार्थक हो सकता है और उसे भवबाधा से मुक्ति मिल सकती है।

... ... मैं ऊपर दिखा चुका हुं कि संस्कृत वाङ्मय का अध्ययन और अनुशीलन आवश्यक, वांछनीय और महत्त्वपूर्ण है और इसलिये हमारे सभी शिक्षालयों में, केवल स्थान ही नहीं बल्कि काफी प्रोत्साहन भी मिलना चाहिये।

संस्कृत रिसर्च इन्स्टीट्युट, दरभंगा के शिलान्यास के अवसर पर प्रदत्त भाषण से, २१ नवम्बर १९५१

श्री डा० एस० राधाकृष्णन्

There is a mistaken notion that Sanskrit is a language of the Hindus, that it deals with their philosophy and religion. it does deal with the philosophy and religion of the Hindus. At the same time, Sanskrit literature embodies so many concepts belonging to other branches of knowledge—politics, economics, music, painting, education, science and other

things. **If we are in a position to read Shakespeare and Goethe, Milton and Browning, why should not our people and other people read Kalidas, Bhavabhuti etc. ?** They belong to the literature of the world and any one who qualifies himself to be citizen of the new emerging world community, will feel that he is not completely prepared for it if he does not know what Indian literature has contributed to world thought.

विश्व संस्कृत परिषद्, बम्बई के अध्यक्षीय भाषण से

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

It (India) built up a magnificent language, Sanskrit and through this language and its arts and architecture, it sent its vibrant message to far away countries. It produced the Upanishads, the Gita and the Buddha. Hardly any language in the world has probably played that vital part in the history of a race which Sanskrit has. It was not only the vehicle of the highest thought and some of the finest literature, but it became the uniting bond for India, even though there were political divisions. The Ramayana and the Mahabharat were woven into the texture of millions of lives in every generations for thousands of years. I have often wondered that if our race forgot the Buddha, the Upanishads and the great epics, what then will it be like ? It would be uprooted and would loose the basic characterestics which have clung to it and given it distinction throughout these long ages, India would cease to be India.

Azad Memorial Address.

× × × ×

If I was asked what is the greatest treasure which India possesses and what is her finest heritage, I would answer unhesitatingly it is the Sanskrit language and literature and all that it contains. This is a magnificent inheritance and so long as this endures and influences the life of our people,

so long will the basic genius of India continue. Apart from it being a treasure of the past, it is, to an astonishing degree for so ancient a language, a living tradition. **I should like to promote the study of Sanskrit** and to put our scholars to work, to explore and bring to light the buried literature in this language that has been almost forgotten.

"Hindu", 13 February, 1949.

× × × ×

भारतीय भाषाओं के ७५ से ८० प्रतिशत शब्द एक जैसे हैं, कारण, अधिकांश भारतीय भाषाएँ संस्कृतमूलक हैं और इसी कारण इनमें ऐक्य का इतना व्यापक निदर्शन होता है। इसी तथ्य से यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि यदि भाषावाद के विष को समाप्त करना है तो भारतीय भाषाओं के इस ऐक्य को विस्तृत करना ही सबसे सरल तरीका है।

'आज', १३ मार्च, १९५९

× × × ×

संसार की प्राचीन भाषाओं में संस्कृत का स्थान बहुत ऊँचा है। मैं चाहता हूं कि आज भी ज्यादा लोग संस्कृत पढ़ें। संस्कृत ने हमारे देश की एकता को बढ़ाया है और संस्कृत से हमारी सभी भाषाओं को बल मिलता है।

६ अक्टूबर, 'हिन्दुस्तान', नई दिल्ली

× × × ×

भारत में उत्तर प्रान्तीय भाषाओं का घनिष्ठ सम्बन्ध संस्कृत से है। दक्षिण की भाषाओं का सम्बन्ध एक दूसरे प्रकार से है। संस्कृत के माध्यम से सांस्कृतिक परम्पराओं में भारतीय भाषायें एक दूसरे से सम्बद्ध होकर चली आ रही हैं। यदि हम इस पहलू का ख्याल नहीं रखते हैं तो इसका अर्थ होगा कि हम उन महती सांस्कृतिक परम्पराओं से अपने को अलग कर रहे हैं।

लोक सभा के भाषण से,
'आज', ९ अगस्त १९५९, वाराणसी

श्री लालबहादुर शास्त्री

संस्कृत तो इस देश की अमूल्य निधि है। यह तो सर्वसम्मत तथ्य है कि संस्कृत के अध्ययन से इस देश के इतिहास के वास्तविक ज्ञान में बड़ी सहायता प्राप्त होती है। पुराण इतिहास के ही रूप हैं। दर्शन और साहित्य का अगाध ज्ञानभण्डार संस्कृत में भरा पड़ा है। इसमें गीता जैसे ग्रन्थरत्न भरे हैं। गीता की कितनी टीकायें लिखी गईं, कितनी उसमें गहराई और दार्शनिक अंश है, यह कौन नहीं अनुभव करता ? केवल दर्शन ही नहीं, किन्तु समाज और संसार किस तरह शान्ति और सहिष्णुता से चले, उसकी भी कल्पना उस समय के संस्कृत ग्रन्थों में स्पष्ट मिलती है। "उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्" आदि उक्तिओं से बढ़ कर विश्वबन्धुत्व का क्या सन्देश मिल सकता है ?

.... राष्ट्र की विशालता को देखते हुए हमें संस्कृत के लिये बहुत कुछ करना होगा। हमारे देश में संस्कृत के विद्वान् बने रहें और उनको प्रोत्साहन मिलता रहे, यह आवश्यक है। यह स्पष्ट ही है कि हरेक के लिये संस्कृत का पूरा पण्डित बनना सम्भव नहीं परन्तु यदि संस्कृत का साधारण ज्ञान भी हो तो उसकी पृष्ठभूमि में साधारण ज्ञान उपार्जन तथा पुरातन भारतीय इतिहास और संस्कृति के अध्ययन में पूरी तरह सहायता मिलेगी।

अ० भा० संस्कृत साहित्य सम्मेलन,
गाजियाबाद, १ जनवरी, १९६४

श्री गुलजारीलाल नन्दा

अगर हमें अपने देश की आध्यात्मिक बातों को कायम रखना है और आध्यात्मिकता को आगे बढ़ाना है तो संस्कृत का ज्ञान बहुत आवश्यक है। आध्यात्मिकता और धर्म हमारे देश में हमेशा रहनेवाले हैं और जो चीज हमेशा रहनेवाली होती है उसके लिए आगे बढ़ना भी आवश्यक हो जाता है। आयुर्वेद की पढ़ाई के लिए संस्कृत की बड़ी आवश्यकता होती है। संस्कृत का उपयोग टेक्नीकल चीजों में जरूर किया जाय। अंग्रेजी इस देश से कुछ सालों में चली जायगी। अंग्रेजी के बाद अगर देश में किसी भाषा

को तैयार होना है तो वह संस्कृत ही हो सकती है। हमारे देश में विज्ञान की भाषा एक होनी चाहिए और वह भाषा संस्कृत ही हो सकती है।

राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन स्मारिका

श्री अशोक मेहता

संस्कृत की सेवा राष्ट्र की सेवा है। हमारी संस्कृति और परम्परा में जो कुछ महान् है, वह इस भाषा में सुरक्षित है। अतः संस्कृत के प्रचार तथा प्रसार के लिए जो भी प्रयास किये जाँय, वह सराहनीय हैं।

२२ जून, १९६४

श्री मुरारजी देसाई—

Although science and technology have made phenomenal progress and knowledge of man considerably widened, it is obvious that man will not be able to use these properly without the aid of wisdom. While each country has its own source of wisdom, we in India have such a precious treasure of it in our ancient literature that it would be difficult to achieve integration of our personalities without assimilating the essence of it. **As most of this ancient literature is in Sanskrit, a study of this language will be handsomely rewarded.**

संस्कृत विश्व-परिषद्, पुरी अधिवेशन, १९५९

श्री भक्त दर्शन

देश की संस्कृति की आधारशिला पर ही हमारी राष्ट्रीय शिक्षा प्रतिष्ठित हो सकती है। यहाँ कोई भी सरकार तबतक राष्ट्रीय नहीं कही जा सकती जबतक कि वह हमारी संस्कृति के आधार संस्कृत को समुचित महत्त्व न प्रदान करे।

मैं सोचता हूं कि लगभग सभी राज्यों में संस्कृत को पूर्णतया समुचित स्थान मिलना चाहिये। इसके लिये व्यावहारिक रूप में हिन्दीभाषी प्रदेशों

में हिन्दी के ३ प्रश्नपत्रों में से एक प्रश्नपत्र पूर्णतया संस्कृत का होना चाहिये। प्रकारान्तर से थोड़े परिणाम में संस्कृत इस प्रकार अनिवार्य होगी। संस्कृत का प्रारम्भिक ज्ञान तो सब को होना ही चाहिये। संस्कृत को पूरे विषय के रूप में पढ़नेवालों को छात्रवृत्तियाँ भी दी जानी चाहिये।

हम चाहते हैं कि संस्कृत देववाणी न रह कर जनवाणी बन जाय।

संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में प्रदत्त भाषण से,
११ जनवरी १९६५

श्री यशवन्त राव चाह्वान

I have always been feeling that the study of any Indian language—may it be from the north or from the south—cannot be said to be complete without the study of Sanskrit, which provides a common thread running through all of them. Sanskrit is the foundation of all the modern Indian languages. But that alone does not fully explain its unique importance. For thousands of years the majority of Indians have developed not only their languages but also their cultural traditions and ways of life on the very basis and with the help of Sanskrit. It has been mainly responsible for maintaining unity in the diversity of this large country. Sanskrit has been recognised on all hands as the basis of the cultural, political and emotional unity of the country. The life and genius of the nation has been expressed in that language. A huge wealth of not only religious and philosophical literature but also the greatest and revered epics of the world, like the Mahabharat and the Ramayan, has been preserved in that language. The Sanskrit drama like Shakuntala have heightened the name of not only the Sanskrit language but India in the world. Not being satisfied with the translation of this great literature—which gave them only glimpses of its real beauty—scholars in even foreign countries like Germany and England came to India and studied the language and through it India's great literature.

We cannot afford to neglect Sanskrit ... ... there is no gainsaying the fact that the study of Sanskit is necessary not only for philologists but all Indians.

संस्कृत विश्व-परिषद्, वम्बई में प्रदत्त भाषण से,
१५ दिसम्बर, १९६१

श्री अनन्तशयनम् आयंगार

मैं यह दावे के साथ कहता हूं कि दूसरी ऐसी भाषा, जो कि राष्ट्रीय एकता का साधन वन सकती है, वह संस्कृत ही है। भारत की प्रत्येक भाषा का महत्त्वपूर्ण साहित्य इसी भाषा के साहित्य से लिया गया है। उत्तर भारतीय भाषायें जब कि संस्कृत से ही ली गई हैं, दक्षिण भारतीय भाषाओं ने भी संस्कृत के शब्द अपनाये हैं। संस्कृत भारत की सांस्कृतिक भाषा रही है। रामायण तथा महाभारत अब भी जनसाधारण का हृदय छू लेते हैं। मैं चाहूंगा कि संस्कृत प्रत्येक उच्च विद्यालय में आवश्यक रूप से पढ़ायी जाय, विशेषरूप से उत्तर भारत में जहाँ कि हिन्दी मातृभाषा है, संस्कृत भाषा का ज्ञान हिन्दी जाननेवालों के लिये भी अपनी भाषा में पारंगत होने की दृष्टि से आवश्यक है।

भाषायी फार्मूले के अन्तर्गत संस्कृत को एक भाषा के रूप में पढ़ने में कोई वाधा नहीं होनी चाहिये, कम से कम हिन्दी भाषियों के लिये।

विश्वज्योति, होशियारपुर, जून १९६५

श्री माधव श्रीहरि अणे

संस्कृत हमारी सांस्कृतिक भाषा है। पहले की अपेक्षा आज राष्ट्रजीवन में प्रादेशिक आदि अनेक प्रकार की एकता हो गई है। इसके वावजूद उन दिनों अधिक विभिन्नता थी किन्तु उस समय संस्कृत ही एक ऐसी भाषा थी जिसके माध्यम से हम हिमालय से कन्याकुमारी तक सभी को एक सूत्र में आवद्ध कर सके। इसे हमारे अपरिगणित पूर्वजों ने इसी कारण माना, देववाणी मान कर अर्चना की और अपने सामाजिक सांस्कृतिक जीवन में इसे अनिवार्य कर दिया।

आज भी यदि आप देश की एकता-अखण्डता चाहते हों तो यही आपका पुराना हथियार है। इसके व्यापक प्रचार से विभिन्न संस्कृति के कट्टर अनुयायी जब सम्पर्क में आयेंगे तब इसकी उस असाधारण आकर्षणशक्ति से आकृष्ट हो कर आपमें घुलमिल जायगें। फिर आप की अभीष्ट एकता करामलकवत् होगी।

आप लोक भाषा के पद पर हिन्दी को बैठायें और सांस्कृतिक या ज्ञान-भाषा का स्थान संस्कृत के लिये सुरक्षित रक्खें। हिन्दी को राष्ट्रभाषा न मान अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा के पद पर बनाये रखना स्वतन्त्र भारत के स्वाभिमान के प्रतिकूल है। हमारा स्वाभिमान हमें जगा-जगा कर कह रहा है कि अंग्रेजी को निकाल बाहर कर वह स्थान हिन्दी को दो और उसके पोषण-रूप में ज्ञानभाषा संस्कृत को रखो।

युक्त प्रान्तीय संस्कृताध्यापक सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण से,

१२ दिसम्बर, १९४८

श्री नरहरि विष्णु गाड़गिल

संस्कृत भाषा का लालित्य, सौन्दर्य, शैली, शब्दसम्पत्ति, गतिशीलता, संस्कृत वाङ्मय में प्रतिपादित विचार, ज्ञान और अध्यात्मविद्या जब मन और आँखों में आती है तब यह सारी सम्पत्ति लोगों के लिये उपयोगी हो, यह इच्छा स्वाभाविक ही है।

१९वीं शताब्दी में जितने भी व्यक्ति विकास के लिये आगे बढ़े, उनमें सभी संस्कृत के पण्डित थे। उन्होंने संस्कृतविद्या से ही प्रेरणा प्राप्त की थी, जैसे राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, लोकमान्य तिलक और महामना मालवीय जी। भारत में बोली जानेवाली सभी भाषायें संस्कृतरूपी महावृक्ष की लतायें हैं, यह कहना अनुचित नहीं होगा। महाभारत और रामायण में जो नीतितत्त्व है उसी के आश्रय से ही भारतीयों के वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन का निर्माण हुआ है। वेदों और उपनिषदों में प्रतिपादित तत्त्वज्ञान ही यहाँ के जीवन का मुख्य आधार है। इसी कारण से भारत में रहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति के लिये संस्कृत का सामान्य ज्ञान आवश्यक-सा हो जाता है।

नवभारत टाइम्स, २ जुलाई, १९६१

श्री नवाब मेहदी नवाज जंग

Though our country is in actual fact a sub-continent and has such a large variety of languages, climates, customs and other such differences between one part and another, we have very many things which give us a common base and nationality, and which are the real factors giving unity to this country. Amongst these one of the most important is Sanskrit. This one reason alone is enough to emphasise the importance of Sanskrit to us in India. However, it should also be remembered that it is through Sanskrit that we have access to our vast and rich heritage.

संस्कृत विश्व-परिषद्, बम्बई अधिवेशन, १५ दिसम्बर, १९६१

श्री डा० कैलाशनाथ काटजू

Everyone recognises that to create a sense of unity a common national language is absolutely necessary. We had already got one, but to our misfortune we have almost forgotten it. I refer to Sanskrit, the language which was spoken and understood throughout ancient India. Shankaracharya went from Kanyakumari to Shrinagar and Amarnath; he spoke Sanskrit throughout and was understood everywhere. In Sanskrit we have got an enormous literature dealing with every topic under the sun.

The Constituent Assembly decided to adopt Hindi as the national language. I do not quarrel with that decision. But Sanskrit is the mother of many of our regional languages and its encouragement will strengthen our sense of national unity.

Northern India Patrika,
May 27, 1961.

श्री रंगनाथ रामचन्द्र दिवाकर

In addition to being the linguistic and cultural foster-mother of our regional languages, Sanskrit has been for

centuries the unifying influence of the various peoples in India. It has always supplied the basic philosophy of life and other thought-material to all regions. The Ramayana, the Mahabharata, the Gita and Upanishads, the Panchtantra and Hitopadesh have been prolific sources of ideas and thoughts which have taken different shapes and form in all the Indian languages. The poetic imagery, the many familiar similes, metaphors have been common to almost all the languages in India because of their common source. The great epic figures of Rama, Sita, Hanuman, Krishna, Radha, Dharmaraja, Bhima, Narad, and so on are to be found in the literature of all our languages. In fact, Sanskrit literature has been the common quarry for us for millenniums, not to speak of centuries. That is the reason of our basic cultural unity and our ability to recognise similarity in thought and imagery in all our languages, whatever our own mother-tongue might be. All these facts show that Sanskrit which has undoubtedly a past greater than any other language, living or dead, classical or otherwise, has a future which neither Greek nor Latin or any other ancient or mediaeval language has dreamt of.

Bhavan's Journal, August 14, 1955.

श्री श्रीप्रकाश

The problem of assigning relative importance to the various languages - regional, national and international—is earnestly engaging our attention at this time. The place that Sanskrit occupies in the scheme of things has also to be kept in view, if we are to keep alive, as we must, our ancient thought and culture and preserve our rich heritage. It is through the medium of Sanskrit that we learn what our ancestors had thought and dreamt of in the ages past ; and knowledge of this ancient tongue will help us to realise what we still can do. Sanskrit is by no means a dead language and if we make a determined effort to learn the language in a

scientific manner and actually use it for speech and writing, we should find it can be comparatively easily learnt and give us great joy and satisfaction if utilised as a vehicle of thought.

संस्कृत विश्व-परिषद्, तिरुपति अधिवेशन, नवम्बर, १९५५

श्री के० सन्तानम्

The Sanskrit language played a vital part in promoting and maintaining this unity. Its importance was only religious and cultural, not political. It did not prevent the growth of regional languages but supplied material to them and formed the link between the learned from all parts of India. ....A revival of Sanskrit will also help linguistic integration powerfully.

Facets of Indian Unity,
Page—13

श्री जयचामराज वाडियार

The Sanskrita language is one of our most valued heritages from the past. It has, from centuries been the vehicle of expression for our philosphy, religion and literature. To us Sanskrita is more than a mere language. It is a symbol of our culture. It appears to be only natural therefore that with the recent revival of interest in our ancient culture which has followed in the wake of political freedom there should be active revival of the Sanskrita language.

संस्कृत विश्वपरिषद्, तिरुपति अधिवेशन, नवम्बर १९५५

डा० हरेकृष्ण मेहताब

.........The study of Sanskrit is essential, therefore, not only for the purpose of understanding the Indian religion and philosophy but also for understanding India's heritage of politics and diplomacy which is a more or less forgotten chapter

in the history because of the foreign rule in the immediate past. I think the succour which the Indian mind was all along receiving from the cradle to the grave in the home life through the Sanskrit literature being read out and explained by the learned few going about for the purpose, should now be made easily available everywhere in school and colleges through regular study of the literature. Unfortunately, in recent years as much attention has not been given to the study of Sanskrit as ought to have been given. As a result of this, younger generation seems to be loosing its mooring on account of its being cut off from the healthy background of the past.

Bharatiya Vidya Bhawan Bulletin,
June, 1959.

श्री पट्टाभि सीतारामैया

There is no doubt that the time has arrived for national forces combined to revive our ancient classical language Sanskrit, to which almost all the regional languages owe their birth and their growth. The object of swaraj is not merely to get rid of foreigners ruling this country but also to get hold all the broken threads of the cultural progress which has stopped thousand years ago and the broken ends of which it is our duty to take up with a view, if possible, to prolonging them to their logical ends. When we realize what mighty treasures of scientific and philosophical works our ancestors had produced, we shall be wonderstruck that we should have been ignorant of the very existence of such valuable literature all these that we have been under the foreign rule. Fortunately Sanskrit is included as one of the languages in the schedule attached to the Constitution of India and remembering the fact that in Malabar every student was made to study Sanskrit till a few years ago and that in certain universities Sanskrit was compulsory for the matriculation examination, we must now gather courage so that to ask for the introduction of

Sanskrit as a subject of the course of studies for high school education is not asking for too much.

One objection that is often raised is that students are called upon to study a number of languages, but if we cast a passing glance at the subjects of studies in European countries like Denmark and Holland and other places, you will find that each student has to learn four languages, namely, the mother tongue, the classical languages of Latin and Greece and finally one or even two of modern languages, such as French and German. So it is that here in India we have to learn our mother tongue, then Hindi and Sanskrit. These latter two are very nearly allied to each other and in most cases the regional language is intimately connected with both. The difficulty of having to learn an additional language is more an argumentative exaggeration than a substantive truth in itself.

संस्कृत सम्मेलन संचिका, गुण्टूर, ११ नवम्बर, १९५५

श्री बी० गोपाल रेड्डी

मुख्य मन्त्री, आन्ध्र प्रदेश

Sanskrit which was neglected in recent times is again receiving considerable attention from various educationists and administrators. It is no a mere question of revivalism of past things but one that is essentially for strengthening regional language. Sanskrit has a double purpose to serve, Sanskrit for its own sake, for it contains all our ancient literature and philosophy and Sanskrit for the sake of giving vitality to the various languages, both of northern India and of south India.

संस्कृत सम्मेलन संचिका, गुण्टूर, ११ नवम्बर, १९५५

श्री वी० आर० कृष्ण ऐयर

न्यायमन्त्री, केरल

In the comity of languages hegemony must go to Sanskrit. It is an ancient language which has earned the pride of place

by virtue of the great culture it embodies. The flower of Indian Culture has stemmed from Sanskrit. We should look upon the whole literature of Sanskrit not from the narrow point of view of its being an ancient language but from a national point of view. No Indian can claim to have imbibed the great things of the past if he has not some kind of acquaintance with Sanskrit literature. I am saying this because we as a nation must know the foundations of our civilizations. We should not cut ourselves away from the past. No civilization can be sound and no culture can be accepted as balanced unless it grows from and is found with the past.

The younger generation and the older generation also must feel that they should learn Sanskrit not because they add one more language to their mental equipments, but with a keen spirit of national endeavour to know what has been done in this country and what our ancient civilization was like.

Trivendram Sanskrit College Magazine
1957-58

श्री के० चन्द्रमौलि, राजस्वमन्त्री, आन्ध्र

Samskrita language acted as unifying force and instilled a sense of unity in the minds of the people. So the revival of culture embodied in Sanskrit is necessary for the consolidation of new forces of swatantra Bharat. Unless there is a reorientation in the policy of the Government of the day, there is no hope for the revival of Samskrit. The Government must assign a proper and important place to Samskrit in the curriculum of high schools, colleges and universities.

विश्व संस्कृत परिषद्, तिरुपति अधिवेशन, नवम्बर १९५५

श्री सी० सुब्रह्मण्यम्, अर्थ एवं शिक्षामन्त्री, मद्रास

Sanskrit is part of our precious national heritage. Some of the grandest thoughts and richest experiences of men in the realm of the spirit are recorded in Sanskrit. Though

no longer a spoken language, it has, by influencing the structure and growth of most other Indian languages, attained immortality. We should spare no effort to promote the learning of Sanskrit in the country.

Bharatiya Vidya Bhawan Bulletin
June—1959

आचार्य विधुशेखर भट्टाचार्य

It is evident, however, that one cannot write a few lines in pure vernacular language without having some fundamental knowledge of Sanskrit, so intimate is the connection between Sanskrit and allied languages. I may be pardoned if I mention that sometimes we find even learned dons of Indian institutions betraying lamentable ignorance about the spelling or meaning of ordinary Sanskrit expressions so very current in our vernaculars. It goes without saying, as our experience shows, that the study of Sanskrit has been, is and will be indispensable in the coining of technical terms in our vernaculars to represent objects and ideas in our researches and discoveries in the domain of science and other technical branches of learning. It is an admitted truth that if by chance the flow of the main Sanskrit language is arrested, the tributaries must perish for want of feeding. It is perhaps for this reason to which the present writer can testify, that the great poet and seer, Rabindra Nath Tagore, desired that no professor should be incharge of any vernacular language in Shantiniketan unless he is wellgrounded in Sanskrit.

In the temple of learning India with the help of Sanskrit can occupy a glorious position in the civilization of the world. Without that what is her status? What would be her acquisition? What would be her culture without Sanskrit, the soul of everything?

The Modern Review,
February 1949.

डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या

The right place of Sanskrit in the scheme of things in the linguistic world has at last come to its own with the study of the language in Europe. Sanskrit to start with has been given a recognition in most of the universities of Europe from its Indo-European implications and its value in the study of Indo-European linguistics. For higher classical linguistics, Sanskrit has become almost a compulsory subject of study. As the language of the Vedas, the oldest literary documents of Indo-European (along with the newly discovered Hittite and other texts, and the poems of Homer), it has received its due homage. Its importance for India is patent, and admitted everywhere. But within India, among Indian intellectuals, there now appears to be a conspiracy of neglect for this great heritage. Truly a prophet is never honoured in his own country. Sanskrit is not dead when it still continues to infuse life-sap into the modern Indian languages. This aspect of Sanskrit at least should never be lost sight of. There is another, and to my mind, an equally important significance of Sanskrit. It is the symbol of Indian culture— of the Indian mind which came into being after the synthesis of the best elements in the Aryan and the Pre-Aryan (Dravidian and Austric) worlds : a mind which has for the last three thousand years been living and having its being in an atmosphere of absolute freedom in the search of truth, and of toleration for all kinds of spritual and other experience; of sympathy of all life, and of the absence of exclusiveness in matters to the ultimate truth.

Indo—Aryan and Hindi
Page 76-77

श्री के० एम० मुंशी

आज के दुर्भाग्यपूर्ण समय में जब कि भौतिकवाद के व्यापक प्रभाव से जीवन के नैतिक मूल्यों की अवहेलना हो रही है, केवल संस्कृत भाषा ही

वह प्रभावपूर्ण शक्ति है जो मनुष्य को नैतिक सिद्धान्तों के अपनाने के लिए प्रेरित कर सकती है।

संस्कृत विश्वपरिषद्, पुरी अधिवेशन, १७ फरवरी १९५९

× × × ×

यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि संस्कृत हमारी धार्मिक, नैतिक, एवं सांस्कृतिक प्रेरणा का साधन है। दुर्भाग्य से आधुनिक जीवन के प्रभाव ने भारत सरकार को त्रिभाषासूत्र बनाने की प्रेरणा दी है जिसमें संस्कृत को स्थान नहीं दिया गया है किन्तु जैसे भी हो सके हमें संस्कृत के अध्ययन को प्रोत्साहन (बढ़ावा) देना चाहिए, क्योंकि संस्कृत सभी भाषाओं की जननी है। संस्कृत को राजकीय संरक्षण का अभाव मुझे सबसे अधिक पीड़ा देता है। यह जनवादी युग है, जनता आगे बढ़ कर इस मामले को हाथ में ले।

कादम्बिनी, मार्च १९६४

× × × ×

It is further believed that a student going up for science or technical course does not need Sanskrit. Why? Is not scientist a man? Has he no need to appreciate beauty or philosophy without which life is a burden? Should he deny himself the art of making love or building a beautiful home or elevating all relations of life into harmony? Will his soul never aspire to heroism, consecration or self-fulfilment?

Science and technical skill are equipment; self-sculpture on the other hand is an essential art of life, an end : and a study of Sanskrit is a basic necessity of this art.

The Creative Art of Life.
P. 29.

डा० वी० राघवन्

It is necessary to reiterate that the Central Sanskrit Board may extend different kinds of aid to higher Sanskrit studies, but if it does not do any thing to save the roots of Sanskrit study in the schools. It will not be long before they

have no leaves and flowers to lend. By way of implementing the Government's three-language formula, some states have dealt the final fatal blow to Sanskrit and those asembled at a Conference like this, many of whose subjects depend ultimately on Sanskrit, can easily realise what serious loss this policy will entail.

अध्यक्षीय भाषण, अ० भा० प्राच्यविद्या परिषद्,
श्रीनगर १९६४

× × × ×

Regarding the regional languages, there is naturally predominant interest in them in their respective areas. Even in Telugu and Malayalam over which Sanskrit has had maximum influence, the recent movement has been towards giving greater place to them and to reduce the scope for Sanskrit. Even Sanskritists of these areas are evincing less enthusiasm for Sanskrit than for their mother tongues. So far as Tamil is concerned, there is now a sweeping and burning zeal among all sections, the boy as well as the scholarly, to advance the course of Tamil at all costs. There can never be any quarrel with movements for the promotion of any language or literature, but the exhibition of that zeal as hate towards another language or literature is reprehensible. Tamil and Sanskrit have lived together and mutual influences are not negligible in literature, religion, philosophy and art : quite a large number of Tamil works, including outstanding classics, require a good grounding in Sanskrit for their proper and complete understanding and enjoyments; and the Tamil Sanskritists have shed glory on the history of Sanskrit. Thoughtful leaders of the Tamilnad have a due realisation of these truths and of the wisdom of the policy of "live and let live". Above all if India is to be a unity and not a pathetic specimen with each limb kicking in its own way, the parts of this union no less than the authority at the hub should see

that the unifying power of Sanskrit and the culture it embodies, is not neglected.

Bharatiya Vidya Bhavan,
Bulletin No. 4. November, 1952

डा० सम्पूर्णानन्द

व्यक्तिगत रूप से मेरा मत यह है कि संस्कृत इस देश की राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। यदि लोग अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा को सीख सकते हैं तो वे संस्कृत क्यों नहीं सीख सकते, जो हमारी प्राचीन भाषा है।

"आज", ९ जून, १९६३

× × × ×

जो लोग यह कहते हैं कि संस्कृत भाषा का समय वीत गया वे गल्ती पर हैं। संस्कृत न केवल भारत में वल्कि समस्त संसार में व्याप्त है। जो सन्देश इस भाषा में हैं वे अन्यत्र नहीं हैं। संस्कृत में वहुमूल्य विभूतियाँ पड़ी हुई हैं। जो यह लाञ्छन लगाते हैं कि संस्कृत मृतभाषा है वे गलत सोचते हैं। संस्कृत जीवित ही नहीं वल्कि मुर्दों के लिये भी संजीवनी है। हम चाहते हैं कि संसार में काफी लोग संस्कृत के जानने वाले हों।

"संसार", २ नवम्वर, १९४८

काका कालेलकर

मराठी गुजराती वंगाली आदि भाषायें जैसे—संस्कृत कुटुम्व की हैं, उसी प्रकार हिन्दी भी संस्कृत कुटुम्व की है। संस्कृत भाषा संस्कार, समृद्धि और विकास की क्षमता की दृष्टि से दुनिया की प्राचीन व अर्वाचीन किसी भी भाषा से कम नहीं है। जो विरासत में हमें मिली है, उस पर हमें अभिमान है। संस्कृत का द्रोह हम से कभी न होगा। अगर हमने मध्यकाल में अन्धे वनकर देववाणी का प्रचार न रोका होता तो हमारे देश की आज जैसी दुर्गति हुई है वैसी न हुई होती।

विश्ववाणी, नवम्वर, १९४५

डा० धीरेन्द्र वर्मा

.... हिन्दी के अतिरिक्त मेरी समझ में प्रत्येक नागरिक वालक को थोड़ा ज्ञान अपने देश की परम्परागत संस्कृत भाषा तथा साहित्य का अनिवार्यरूप से होना चाहिये। योरोप में तवतक किसी को वास्तव में शिक्षित—यह साक्षर होने से भिन्न बात है—नहीं समझा जाता—जवतक वह थोड़ी वहुत योरोप की क्लासिक्स अर्थात् ग्रीक या लेटिन नहीं जानता हो। संस्कृत तथा पाली भारत की क्लासिक्स हैं और इनका स्थान भारतीय शिक्षापद्धति में वही होना चाहिये जो योरोप की शिक्षापद्धति में ग्रीक और लैटिन को प्राप्त है। नागरी लिपि, हिन्दी तथा प्रारम्भिक संस्कृत सीख लेने के वाद आवश्यकतानुसार वच्चों को अन्य भाषायें तथा लिपियाँ सिखायी जा सकती हैं।

विचारधारा, पृ० १५२

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

अस्मत्-प्राचीनतमा वाणी संस्कृतरूपेणाद्यापि विद्यमाना। सेयं आर्य-भारती न केवलं भारतीयानामेव शेवधिः सिन्धु-युरोपीयभाषाभाषिणां सर्वेषां स्वभाषेतिवृत्तपरिज्ञानाय न संस्कृतमृतेऽन्यः पन्थाः। अत एवेयं गीः सर्वेषु पाश्चात्य-विश्वविद्यालयेषु सवहुमानं पाठ्यविषयेषु सन्निवेशिता पौरस्त्यदेशेषु च चीन-जापान-प्रभृतिषु वौद्ध-वाङ्मयस्य मूलवाणीति तत्र सम्मानिता। एवं अस्ति अखिलेऽपि भूवलये संस्कृतभारत्या विद्यासु स्थानम्। अस्माकन्तु नेदीयान् औरसः सम्वन्ध इति युक्तस्तत्र स्नेहातिरेकः ....। कथं न हिन्दी कथा-ग्रन्थवत् संस्कृतसाहित्यग्रन्थानां स्यात् सार्वजनीनमध्ययनम्?

सम्पादक के पास प्रेषित व्यक्तिगत पत्र से उद्धृत

आचार्य नरेन्द्रदेव

स्वाधीन होने पर हमारा उत्तरदायित्व बहुत वढ़ गया है। हमारा कर्त्तव्य है कि संस्कृत विद्या के अध्ययन को हम पाठ्यक्रम में विशिष्ट स्थान दें और अन्वेषण के कार्य को प्रोत्साहन दें। आधुनिक युग के दो महापुरुषों के कारण तथा अपनी प्राचीन संस्कृति के कारण हमारा संसार में आदर है। यह खेद

का विषय होगा कि हम इस आवश्यक कर्त्तव्य की ओर उचित ध्यान न दें और संस्कृत वाङ्मय की रक्षा और वृद्धि के प्रति उदासीनता दिखावें। संस्कृत वाङ्मय आदर और गौरव की वस्तु है और उसका विस्तार और गाम्भीर्य हमें चकित कर देता है। हमको उसका उचित गर्व होना चाहिए।

संस्कृत संसार की सबसे प्राचीन आर्यभाषा है जिसका वाङ्मय आज भी विद्यमान है। ऋग्वेद हमारा सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। रामायण और महाभारत संसार के अनुपम और बेजोड़ काव्य हैं। यही हमारी संस्कृति की मूल भित्ति है।

जनवाणी, फरवरी, १९४९

डा० अमरनाथ झा

इस देश के प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति के लिए संस्कृत का ज्ञान परमावश्यक है। हमारे पुराने ग्रन्थ, हमारा दर्शन शास्त्र, हमारी वैज्ञानिक पुस्तकें, हमारी धार्मिक पुस्तकें, हमारे नाटक और काव्य सभी संस्कृत में हैं। संस्कृत की सहायता से हम देश के हर प्रान्त के वासियों से परस्पर वार्तालाप और पत्र-व्यवहार कर सकते हैं। समस्त देश के विभिन्न समुदाय पर संस्कृत का प्रभाव है और सभी भाषायें आर्य अथवा द्राविड़, संस्कृत से प्रभावित हुई हैं, और हिन्दी तो संस्कृततनया है ही।

विचारधारा, पृ० ९७

डा० के० गार्डे

The place of a classical language in a secondary school curriculum cannot be exaggerated. Battles have been fought and won on this point. The study of a classical language creates ballast and inspires seriousness. It creates the habit of hard work and inculcates discipline. It trains the memory, clarifies pronunciation and enriches vocabulary. All these advantages which are true in the case of classical languages like Greek and Latin are all the more true in the case of Sanskrit.

We have a vigorous and perfectly justified plea for making the modern languages the media of instruction even up to the highest stage. But if we ignore or even underrate the role of Sanskrit in this connection we shall be like engineers who plan an elaborate irrigation project without insuring incessant supply of water. Sanskrit is to national educational what the main current of the Tungabhadra is to the whole canal scheme.

अध्यक्षीय भाषण, अ० भा० शिक्षा सम्मेलन,
हैदराबाद, १९५०

श्री सर मिर्जा इस्माइल

One cannot contemplate with equanimity though happily such an eventuality is most improbable, a condition of things when Sanskrit would be as divorced from the every-day life of the masses in this country as Latin and Greek are in Europe. A light would have gone from the life of the people and the distinctive features of Hindu culture which have won for it an honoured place in world-thought would soon be effected from the life of the community to the great disadvantage and loss both of India and of the world.

Tanjaur Saraswati Mahal Library
Magazine, 1939.

श्री विनायक दामोदर सावरकर

As our history tells the story of action of our race so does our literature taken in its fullest sense tells the story of thoughts of our race. Thought, they say is inseparable from our common tongue the संस्कृत, verily it is our mother tongue—the tongue in which the mothers of our race spoke and which has given birth to all our present tongues. Our gods spoke in संस्कृत, our sages thought in संस्कृत, our poets wrote in संस्कृत, all that is best in us—the best thoughts, the best ideas, the

best line—seeks instinctively to cloth itself in संस्कृत. To millions it is still the language of theirs gods. To others it is the language of our ancestors, to all it is the **language-par-excellence** a common treasure, that enriches all the family of our sister languages गुजराती and गुरुमुखी, सिन्धी and हिन्दी, तमिल and तेलगू, महाराष्ट्री and मलयालम, बंगाली and सिंघाली constitutes the vital nerve-thread that runs through us vivifying and tonning our feelings and aspirations into a harmonious whole.

Hindutva, Pages—77-78

श्री डा० रघुवीर

The glory of India is bound up with Sanskrit literature. There is no harm in repeating the truism that whatever is Sanskritic is Indian and that can be found nowhere else. **India stands if Sanskrit stands and India falls if Sanskrit falls.** Every educationists, in India, whatever may be his religion or race must realize this fact. Those who are blinded by their foreign loyalities are definitely harming India. Every true nationalist will have to concede that Sanskrit as the backbone should not be allowed to droop down. What I have suggested in this article needs careful consideration and adoption by all universities.

सम्पादक को प्रेषित एक हस्तलिखित लेख से

× × × ×

संविधान ने महती दूरदर्शिता से संस्कृत को आधुनिक भारतीय भाषाओं में स्थान दिया है। संस्कृत हमारी स्रोतभाषा, उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम और मध्यप्रदेश में संस्कृत हमारी मातामही, धात्री, पोष्ट्री रही है और रहेगी। विशालता, गम्भीरता, प्राचीनता, विकासक्षमता आदि गुणों में संस्कृत अनुपम तथा अप्रतिद्वन्दिनी है। हमारी आधुनिक भाषाओं के साथ इसका सम्बन्ध अजर-अमर है। हमारी आधुनिक भाषाओं की आसक्ति तथा स्वदेश-उपेक्षा के मद में कभी-कभी लोग संस्कृत का अपमान करते हुए दिखाई देते हैं। वे वास्तव में संस्कृत का नहीं किन्तु अपना अपमान करते हैं।

सरस्वती-विहार, पृ० ५०

श्री डा० रमेशचन्द्र मजुमदार

The first pre-requisite for such a study of ancient Indian history and culture is the wide diffusion of the study of Sanskrit and giving it a much better status in our so-called higher and liberal education through the colleges and universities. The study of Sanskrit language and literature is not regarded now as an essential part of a liberal education. It is practically confined to a large number of Indian Pandits trained in "tols" for very few among those who pursue their study in the universities, go in for the highest degree in Sanskrit. The result has been extremely unfortunate, almost disasterous from the point of view of culture. All our source-books for the study of Indian culture are written in Sanskrit or a language immediately derived from it, and if almost all men of progressive ideas trained on modern lines, from whose ranks our leaders of thought and action must necessarily come, are ignorant of this language, Indian culture cannot exercise that degree of influence or our future life and policy as we all desire.

अध्यक्षीय भाषण, अ० भा० प्राच्यविद्या परिषद्
दरभंगा, अक्टूबर, १९४८

सरदार एम० के० पणिक्कर

If Sanskrit is thus essential factor of our national life and cannot be separated from it, as I have tried to demonstrate, then it behoves us to ensure that it does not merely remain the embodiment of classical learning, that alongside with making its study popular, we should also introduce into it a modern content and give it a new vitality which would absorb all that is of value from other languages. We cannot merely continue to praise Sanskrit for its past greatness and the inspiration that it gives to us. It must live again as a

language of culture, as it did at all times of India's national greatness. It must contribute to our life. It must connect itself with the new movements.

अध्यक्षीय भाषण, अ० भा० संस्कृत परिषद्,
लखनऊ, १९५१

श्री चिन्तामणि विनायक देशमुख

What then is the future of Sanskrit? Have we no use for it? Is Sanskrit only a heirloom?

That this is not so will be evident if one remembers that not only do all languages of India owe their origin directly or indirectly to Sanskrit, but they depend on it for their sustenance and growth. With independence and the country's development, economical, social and cultural, all the regional languages of India today are called upon to bear larger burdens than before. Their advance into higher education, administration, commerce and above all in science has thrown heavy responsibilities on them. This more so in the case of the national language. Most of these derived languages do not have the inherent equipment in themselves to enable to discharge these responsiblities from within their own resources. They need fortification from without. Now if there is one language that can offer this fortification to them it is Sanskrit. One reason for this being so is that Sanskrit is the nearest of kin : hence the transfusion, or to use a botanical term, the grafting, becomes easy. But the more important reason is that Sanskrit is a language which can deliver the goods.

This is so would perhaps be by itself sufficient justification for holding that Sanskrit as a language needs to be nurtured and preserved—preserved not somewhere in seclusion but as a part and parcel of our national existence.

अध्यक्षीय भाषण, अ० भा० संस्कृत साहित्य सम्मेलन
नई दिल्ली, मार्च, १९५५

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

Sanskrit is the wish-fulfilling mother of Indian Culture. The full stature of the Indian mind is mirrored in the heritage of Sanskrit. The ambrosial rain of Sanskrit from the heavenly minds of great authors has kept the soul of the people saturated through the ages.

Sanskrit has not forsaken India through her hours of trial. Her great scriptures have stood solidly by us. The Gita and the Upnishads, the Vedanta philosophy and the epics form the durable foundations on which the ideals of national freedom were based and our future reconstruction must bear the stamp of Sanskrit pattern. We should wake up in time to fulfil our obligation to Sanskrit.

The value of Sanskrit for the future reconstruction of the Indian nation must be realised as part of national planning and accepted for immediate implementation.

अध्यक्षीय भाषण, अ० भा० प्राच्यविद्या सम्मेलन,
गौहाटी, जनवरी, १९६५

आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी

पुरानी पोथियों ने मनीषा की उज्ज्वलता संसार के सामने निर्विवाद रूप से प्रकट कर दी है। भारतीय साहित्य संसार का उत्तम और अत्यन्त प्रेरणादायक साहित्य स्वीकार किया जा चुका है। इस साहित्य ने पिछले जमाने में लगभग सारे ज्ञात संसार को नाना भाव से प्रभावित किया है और आज भी सभी सभ्य देशों में कुछ न कुछ विद्वान ऐसे अवश्य हैं जो इस साहित्य के पठन-पाठन से मनुष्यता के कल्याण का स्वप्न देखते हैं। इस

विशाल साहित्य का अध्ययन स्फूर्तिदायक, मनोरंजक और आशा का सन्देशवाहक है।

अशोक के फूल, पृ० ११२

× × × ×

संस्कृत भारतीय मस्तिष्क के सर्वोत्तम को प्रकाशित करनेवाली अतुलनीय भाषा है। भारतवर्ष जब कभी गर्व से सिर ऊपर उठायेगा तो वह इस लिये कि उसके पूर्वजों ने अपूर्व ज्ञान का भण्डार इस भाषा में रख छोड़ा है। दुनिया की दूसरी कोई भी प्राचीन भाषा इतनी समृद्ध नहीं है। इस भाषा को ठीक-ठीक समझे बिना और उसका आश्रय लिये बिना भारतवर्ष की आत्मा तृप्त नहीं हो सकती।

विश्वभारती पत्रिका, अक्टूबर-दिसम्बर, १९४४

आचार्य शिवपूजन सहाय

आवश्यकता तो इस बात की है कि संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाएँ स्कूल से कालेज तक अनिवार्य कर दी जायँ। इसमें छात्रों की सुविधा बढ़ जायेगी, उनकी अनेक कठिनाइयाँ सरल हो जायेंगी। जो सज्जन संस्कृत को हिन्दी के उन्नतिपथ का कण्टक समझते हैं, वे मेरी समझ में बड़ी भूल करते हैं। संस्कृत-शिक्षा की अनिवार्यता से हिन्दी को बड़ा बल मिलेगा और हिन्दी की शैली निखरती चली जायेगी। आज के छात्र कल के लेखक, सम्पादक और वक्ता होंगे। उनका उच्चारण और शब्द ज्ञान, उनकी लेखन प्रणाली और शब्द योजना संस्कृत के प्रभाव से बहुत परिष्कृत हो जायेगी। कालेजों के उच्च कक्षाओं के छात्र भी संस्कृत के गतिविधि से अपरिचित होने के कारण बहुत से प्रचलित तत्सम शब्दों को शुद्धता के साथ नहीं लिख पाते। शब्दों के शुद्ध प्रयोगों से भी भद्दी भूलें उनमें हुआ करती हैं। यह स्थिति दिन-दिन शोचनीय होती जा रही है। परीक्षोत्तीर्ण होकर डिग्रीधारी हो जाने पर भी अनेक छात्र अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा की शब्द-शक्ति और शब्द-सम्पत्ति से अनभिज्ञ ही रह जाते हैं। फिर जब वे साहित्य सेवा क्षेत्र में आ जाते हैं तो उनकी त्रुटियों से भाषा का बड़ा अहित होता है।

आजकल के पत्रों और पत्रिकाओं तथा उत्साही होनहार लेखकों को छोटी-छोटी पुस्तकों में यह बात स्पष्ट दिखाई पड़ती है। जबतक स्कूलों में संस्कृत की पढ़ाई अनिवार्य न होगी तब तक इस अवस्था में कोई सुधार नहीं हो सकता।

शिवपूजन रचनावली, भाग ३, पृ० ३१२

श्री सेठ गोविन्द दास

संस्कृत की शब्द-सरिता भारतवर्ष की सभी साहित्यिक भाषाओं का पोषण करती है। उसकी उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं, अभिव्यञ्जनाओं और सूक्तियों से भारत की प्रत्येक भाषा के ग्रन्थ ओत-प्रोत हैं। यही भारत की सांस्कृतिक एकता की प्रतीक है। उसके शब्द प्रत्येक भाषा में इतने प्राचुर्य से प्रयुक्त हुए हैं कि कभी-कभी दो भारतीय भाषाओं में भेद करना कठिन हो जाता है।

दक्षिण में तमिलभाषी कहते हैं, उनकी भाषा में संस्कृत शब्द नहीं है। उनका यह कथन सर्वथा भ्रमपूर्ण है। मद्रास विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत तमिलभाषा के सबसे बड़े कोष "तामिल लैक्सिकन" पर दृष्टिपात करने से यह विदित हो जायगा कि तमिल की ५० प्रतिशत शब्दावली संस्कृत की हैं।

केवल भारत ही नहीं सिंहल, श्याम आदि देशों की भाषायें भी संस्कृत से अनुप्राणित हैं। उनकी कविता, धार्मिक विचारधारा, प्रशासन की शब्दावली, वैज्ञानिक पदावली आद्योपान्त संस्कृतमय हैं।

पाठक स्पष्ट ही समझ सकते हैं कि यदि समस्त भारत में संस्कृत-शिक्षा अनिवार्य कर दी जाय तो न केवल भारत में ही प्रत्युत भूमण्डल के एक अन्य विशाल भूभाग के साथ भी हमारी सांस्कृतिक एकता कितनी सुदृढ़ एवं चिरस्थायिनी हो सकती है।

अध्यक्षीय भाषण से

अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, मेरठ

श्री अटल बिहारी वाजपेयी—

स्वतंत्रता के पश्चात् इस बात की आशा की जाती थी कि जिस "स्व" का साक्षात्कार संस्कृत भाषा के माध्यम से सर्वोत्तम ढङ्ग से हो सकता है, उसकी व्यवस्था की जायेगी। संस्कृत हमारी परम्परा का पवित्रतम प्रवाह है। राष्ट्रीय ज्ञान की कुञ्जी है। भारतीय संस्कृति का अजस्र स्रोत है। संस्कृत की प्रशंसा में जो कुछ भी कहा जाय, थोड़ा है। जो संस्कृत की प्रशंसा करते हैं, मैं समझता हूँ कि वे स्वयं अपना सम्मान बढ़ाते हैं, संस्कृत का सम्मान नहीं, क्योंकि उसका सम्मान तो स्वयंसिद्ध है, किन्तु प्रश्न यह है कि संस्कृत भाषा के पठन-पाठन के लिए, उसके प्रचलन के लिए हम इस समय क्या प्रयत्न कर रहे हैं।

२५ मई १९५९, लोकसभा में प्रदत्त भाषण से

श्री जयप्रकाशनारायण

साधारणतः भारतीय हिन्दू अपने प्राचीन वाङ्मय से सर्वथा अपरिचित होता है। जो अपढ़ हैं, उनका तो कहना ही क्या! अधिक से अधिक उनके लिए इतना ही सम्भव है कि गाँवों के कथावाचकों से वे उस वाङ्मय का थोड़ा परिचय प्राप्त करें। लेकिन कथावाचक प्रायः रामायण, श्रीमद्भागवत तथा अन्य पुराणों से आगे नहीं जाते। जो पढ़े हिन्दू हैं वे अधिकतर अंग्रेजी वाङ्मय से परिचित होते हैं। इसमें भारतीय शिक्षा-पद्धति का दोष तो है ही, साथ ही साथ संस्कृत में प्रवेश होने की कठिनाई के कारण जो अपने दर्शनादि. वेदादि को देखना भी चाहते हैं, वे उन्हें देखने के सौभाग्य से वंचित रह जाते हैं। अंग्रेजी के द्वारा इनका मनन कर सकते हैं लेकिम अंग्रेजी की इतनी योग्यता वहुत कम लोगों में होती है। इस परिस्थिति का नतीजा यह होता है कि हममें से अधिकांश अपने प्राचीन वाङ्मय को एक अपूर्व, अग्राह्य, अगम्य वस्तु समझ लेते हैं, जिससे हमारा मानसिक स्वातन्त्र्य और हमारा स्वाभाविक विकास दब जाता है। हमारा वेद, हमारे दर्शन

हिमालय-शृङ्खला वन जाते हैं, जिनकी चोटी पर हमारा पहुंचना असाध्य मान लिया जाता है। इस मानसिक और बौद्धिक त्रुटि को मिटाये बिना हममें न विचार-स्वातंत्र्य पैदा हो सकता है और न मानसिक साहस। यदि प्राचीन भित्तियों के आधार पर हमें सभ्यता की नई मंजिलें खड़ी करनी हैं, तो उन भित्तियों को दृढ़ करना और उनका महत्त्व समझना आवश्यक होगा।

"जयप्रकाश की विचारधारा", पृ० २७३

श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

भारत एक राष्ट्र है। इसका परिचय व ज्ञान संस्कृत का ज्ञान प्राप्त किये बगैर सम्भव नहीं। भारत से बाहर जब कोई भारतीय जाता है तो उसको देशभक्ति का महत्त्व मालूम होता है और उसका हृदय भारत के प्रति श्रद्धा और भक्ति से पूर्ण हो जाता है किन्तु जो लोग भारत से बाहर जाने का अवसर नहीं पाते उनको भारतभक्त बनाने और भारतभूमि से परिचय कराने का एकमात्र मार्ग है कि भारत के प्रत्येक बच्चे को "जननी जन्मभूमिश्च-स्वर्गादपि गरीयसी" के पाठ के साथ-साथ संस्कृत पढ़ाई जाय।

नवभारत टाइम्स, २ जुलाई, १९६१

डा० सर सी० वी० रमन

वस्तुतः राष्ट्रभाषा के योग्य संस्कृत को पुनः अपने उचित स्थान पर रखना हमारा कर्त्तव्य है और बिना किसी शर्त के यह हमें १५ वर्ष की अवधि में करना चाहिए। संस्कृत हमारे रक्त में प्रवाहित है और यह केवल संस्कृत भाषा ही है जो देश की एकता को स्थापित कर सकती है।

१४ मार्च, १९५७

श्री बदरुद्दीन तैयबजी

उपकुलपति, अलीगढ़ विश्वविद्यालय

भारतीय परम्पराओं और भारतीय वाङ्मय को जो नहीं जानता उसे मैं भारतीय नहीं मानता। प्रत्येक भारतीय को चाहे वह हिन्दू हो अथवा मुसलमान उसे संस्कृत का ज्ञान होना चाहिए। यदि वह व्यास, वाल्मीकि, कालीदास, भवभूति को नहीं जानता तो वह कैसा भारतीय है? अतः भारत की इस प्राचीन भाषा का ज्ञान अनिवार्यतः सबको होना चाहिए।

अलीगढ़ विश्वविद्यालय में संस्कृत परिषद् के उद्घाटन
के अवसर पर प्रदत्त भाषण से

श्री मेहरचन्द महाजन

प्रधान न्यायाधीश, भारत

We are inheritors of this language of Sanskrit which our ancestors used as the vehicle of their thoughts. All our culture and religion are embedded in Sanskrit literature. So on us lies the responsibility of bringing Sanskrit to the top. Personally, I feel that Government or no Government, if all of us in the north and the south say that Sanskrit must be learnt, it will be learnt. If we look for the Government or Universities, and our boys devote more time to English literature and reading novels of all kinds in foreign languages character-building is not possible in this country. **In my opinion character-building can best be achieved only through Sanskrit.**

Golden Jubilee Souvenir,
Madras Sanskrit College, 1956.

श्री एम० पतञ्जलि शास्त्री

प्रधान न्यायाधीश, भारत

If our religion has been the storehouse of our cultural values and traditions, Sanskrit has been their principal medium of expression through the ages. But paradoxical as it may seem, since the advent of independence the study of Sanskrit has been steadily losing ground. I need not go into the cause for this unfortunate development to some of which I referred in my recent address to a convocation of the Bihar Sanskrit Samiti. There I pleaded for the introduction of Sanskrit as a subject of compulsory study in the curriculum of secondary schools and of the arts courses at least in Colleges. In non-Hindi speaking areas this has not been found practicable, as the curriculum is burdened with the study of three languages, viz. the regional language, Hindi and English. No doubt, Hindi is not compulsory in those regions and a pupil could opt for Sanskrit. But as Hindi has been recognized practically as the national language and offers much greater prospects of employment, students naturally take to the study of that language in preference to Sanskrit, which is thus crowded out of the curriculum. **As Hindi is the regional language of this part of the Country, I think there ought to be room in the curriculum for Sanskrit as a compulsory subject.** If even in Hindi-speaking regions Sanskrit is not accorded that status, the prospect of its survival on any significant scale in free India is gloomy indeed.

दीक्षान्त भाषण, हिन्दू विश्वविद्यालय,
दिसम्बर १९५६, वाराणसी

× × × ×

सम्प्रति हमें स्वीय विचारानुसार अपनी शैक्षणिक नीति निर्धारण करने की शक्ति प्राप्त है और मेरे विचार से यह सर्वोत्कृष्ट प्रकारेण इसी तरह संभव है कि हम संस्कृत को, जो अपनी संस्कृति की आधारशिला और आगार है, माध्यमिक स्तर और कालेजों के कलासम्बन्धी पाठ्यक्रमों के अनिवार्य अंग के रूप में अध्ययन का विषय बना दें।

× × × ×

इस के पश्चात् अगर हम दूरदर्शी बनें और उस अनतिदूर काल की कल्पना करें जब अंगरेजी भारतीय रंगमंच से अत्यल्प समर्थकों को छोड़कर अन्तर्हित हो जायगी तो उस समय हमारे शिक्षित वर्गों के लिये उच्च साहित्य में गति का साधन केवल संस्कृत ही होगी और यही समय है कि हमारे शिक्षाधिकारी नवयुवकों को उस दिन के लिये तैयार करें, उस भाषा में शिक्षा देने के लिये कदम उठावें।

दीक्षान्त भाषण
विहार संस्कृत समिति, पटना १९५५

श्री पी० बी० गजेन्द्रगडकर
प्रधान न्यायाधीश, भारत

It was only right that Sanskrit should be given its rightful place in the educational system.

Sanskrit linked the present with the past and no nation that tended to forget its past could hope for a bright present or future.

Hindustan Times,
14 September, 1964

T. L. Venkatarama Iyer

न्यायाधीश, सुप्रीमकोर्ट

If this country was to have a great future it could only be by developing on the lines of its own culture, and **what is the culture of India without Sanskrit ?**

It is in that language that for thousands of years the great minds of this country have expressed themselves and built up an invaluable religion, philosophy, literature and art which we - nay mankind can ill-afford to lose.

Golden Jubilee Souvenir,
Madras Sanskrit College, 1956

श्री पी० गोविन्द मेनन

न्यायाधीश, मद्रास हाईकोर्ट

It is absolutely necessary that **every Indian should have a modicum of knowledge of our ancient classics and for that purpose a working knowledge of Sanskrit is essential.** Our youngmen must be able to read and appreciate the works of Kalidasa and Bhavabhuti.

Golden Jubilee Souvenir,
Madras Sanskrit College, 1956

श्री प्रशान्त विहारी मुकर्जी, न्यायभारती

न्यायाधीश, कलकत्ता हाईकोर्ट

I believe Sanskrit to be the only language which can develop an all-India outlook among the citizen of this great country. The priceless philosophy, sociology, history and the rich tradition of India are all interpreted and find their

voice in Sanskrit and Sanskrit text. A citizen of free India would indeed be a disinherited citizen if he is not taught and educated in the language in which his country's philosophy, history and traditions have expressed themselves.

Sanskrit is equally an important language and subject from the point of view of modern science. The modern age is regarded as the age of science. Sanskrit contains a vast wealth of such sciences as physics, chemistry, mathematics, physiology, astromony and astrology which educationists in India cannot afford to ignore.

वङ्गीय संस्कृत शिक्षा परिषद्, कलकत्ता के
अध्यक्षीय भाषण से, १९५७

श्री पी० वी० राजमन्नार

चीफ जस्टिस, मद्रास

I would like every boy and girl, irrespective of caste, creed or community, to undergo a course of study in Sanskrit. I want them to learn Sanskrit not merely because all our ancient culture and all the best that has been thought and said by our wise men in enshrined in that language, nor even because greatest literature in the world, but because of the great educative value for the young students.

Enshrined in the literature of Sanskrit is almost all the culture of our land. If we wish to acquire that culture, we must go to Sanskrit, and unless we are determined and decided to give up our ancient culture we must give our children an opportunity to learn Sanskrit by making the study of the language compulsory in our schools.

Sanskrit in India, Page 12.

श्री डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी

I would favour Sanskrit, which is still the ellimitable and unlimited store-house, from which knowledge and wisdom have flowed to all the civilised world and Sanskrit should reoccupy the most honoured place, in the national educational scheme of India.

संसद के भाषण से

श्री कामाख्या राम शर्मा बरुआ

During the age of the Ramayan, the Aryan India attained great heights in the virtues of truthfulness, sense of justice, courage, enterprise and strength of character. The luxury, idleness and selfishness had not tarnished their society. The high ideals of life and the virtues depicted in the Ramayan by Poet Valmiki have never been exceeded in any other age and other country. No other literature of the world has held up an ideal of life higher than that we get in Vedic and post-Vedic Sanskrit literature. It goes without saying that the study of such a language and such a literature will ennoble the character of our students. Therefore, Sanskrit education is indispensable for us and should occupy a compulsory and prominent place in our schools and colleges.

Convocational Address,
Assam Sanskrit Samiti, 1960

कविवर श्री सुमित्रानन्दन पन्त

आज संसार में अवश्य भौतिक उन्नति सर्वत्र दिखाई पड़ रही है, परन्तु इससे शान्ति नहीं मिल सकती। शान्ति तो आत्मगुणों के विकास से

मिलती है। जो विना संस्कृत-अध्ययन के सम्भव नहीं। अपनी प्राचीन संस्कृति, कला और परम्परा की पुनः प्रतिष्ठा के लिए संस्कृत भाषा और साहित्य का अध्ययन अनिवार्य होना चाहिए।

अ० भा० संस्कृत परिषद्, लखनऊ, विवरण पुस्तिका
८ अक्टूबर, १९५३

श्री कैलाश प्रकाश

शिक्षा मन्त्री—उत्तर प्रदेश

हम राष्ट्रीयता का नारा लगाते हैं परन्तु यह भूल जाते हैं कि राष्ट्रीयता किस प्रकार प्राप्त हो सकती है। राष्ट्रीयता का प्राणतत्त्व संस्कृति-चेतना में निहित होता है। अतः हम यदि अपनी राष्ट्रीयता की चेतना को स्वस्थ और सुदृढ़ रूप में परिनिष्ठित देखना चाहते हैं तो हमें भारतीय संस्कृति और उसकी भाषा संस्कृत के प्रति आस्था को जागरित रखना होगा।

संस्कृत शिक्षा परिषद् के उद्घाटन भाषण से,
गाजियाबाद, ३ जनवरी, १९६४

श्रीमती महादेवी वर्मा

संस्कृत-साहित्य मानवतावादी साहित्य रहा है। इसमें चेतना की व्यापकता और करुणा-धर्म दोनों सन्निहित है। आज जब ज्ञान को देनेवाले और लेनेवाले दोनों व्यवसायी हो गये हैं तो संस्कृत-साहित्य की उदात्त विचारधारा का विकास आवश्यक हो गया है।

अ० भा० संस्कृत परिषद्, लखनऊ, विवरण पुस्तिका
१६ सितम्बर, १९५२

प्रो० के० ए० नीलकण्ठ शास्त्री,
मद्रास विश्वविद्यालय

It is not without significance that European scholars of repute have addressed themselves in almost every generation to fresh renderings and interpretations of Plato, Aristotle and other great writers of antiquity. They believe that their civilization is rooted in those classics and that the classics are susceptible of significant and varied applications in modern contexts. We owe a similar duty to our great books, and should set about creating conditions under which a fair percentage of our youth will get the chance of studying such books directly for themselves, and imbibe our national ideals of the founten source. Sanskrit and its literature must gain a much larger place in courses of study for the young, and in the researches undertaken by maturer minds, not only in the humanities but in the applied sciences like medicine and astronomy, spheres in which we have ancient achievements which have been almost totally neglected and forgotten.

India has most to gain for herself and for the world by maintaining her identity, the ethos of her own time-honoured culture, and by renovating its moorings in the basic values of Satya, Dharma, Ahimsa, Asanga and so on, which have been impaired, but by no means snapped by generations of foreign rule ; she must regain her freedom of spirit, and seek out her own solutions of her problems, material and moral, instead of running after alien models or dipending too much on foreign aid. A primary pre-requisite for such vital developments is the restoration of our classics to a place of honour in our educational system, and the planning and steady pursuit of their study and interpretation in the light of present requirements. This is work which can legitimately claim a larger measure of support from our present Government than from its predecessor.

Presidential Address
All-India Oriental Conference
Lucknow.

सर सी. पी. रामस्वामी ऐयर.

उपकुलपति, अन्नामलै विश्वविद्यालय

There is no gain saying the fact that after muslim rule began to be established in India and later when several European nations contended for mastary, Sanskrit learning and instruction began to decay. But even to-day one of the patent instruments of popular culture is the diffusion of the Ramayan and the Mahabharat and Puranic Stories and the tenets of philosophy couched in popular language by travelling singers, expounders of sacred scriptures and performers of what are called Bhajanas or Kalakshepams which are extremely popular. A survey of any of the daily newspapers in Madras (South India) will disclose that at least half a dozen such discourses are delivered daily to audiences numbering hundreds. Although these expositors use Tamil or Telugu yet at least a third of their vocabulary is Sanskrit which is easily understood by the masses. They also recite many Sanskrit verses in the course of their discourses which are both understood and appreciated. Sanskrit moreover is used in daily prayers and household ceremonies and in temple worship and these play their part in keeping alive the speech and the locution of Sanskrit. Boys and Girls all over the country still learn prayers or psalms entitled Stotras which are mainly in Sanskrit. Sanskrit thus not only embodies the ideals of the race, is not only the language of the epics, Puranas and Upanishads, but all the intinate prayers and suppalications of the people are largely in Sanskrit in most parts of the Country and Gandhiji's description of the efficacy of the Ramanama celebrated.

Furthermore the Modern Indian Languages Marathi, Hindi, Bengali, Maithili and Gujarati are predominantly Sanskritic in their vocabulary. Even in the Dravidian areas, Sanskrit influence has been pervasive-words in daily use in Tamil, Telugu, Kanarese or Malayalam like jala or neera for water, anna for food, supa for soup, Surya, Chandra and Nakshatra

for Sun, Moon and Stars, Bhoomi for the earth, Dina and Ratri for day and night are pure Sanskrit terms. In short it may be said that by means of the constant use of a language which has a comprehensive sacred and secular literature, Sanskrit like the later Greek Koine and Classical Latin in medieval times is still fundamentally alive.

From what has been outlined it would be inacurate to call Sanskrit a dead language. Never the less it must be admitted that indigenous shcolars and Pandits have persisted in clinging to the elaborate inflections and grammatical and etymological complexities of the ancient tongue. Old and Medieval English was, like Sanskrit, complicated in the matter of gender, tense and inflection. But through the Conscious an unconscious influence of great poets and prose writers and other literary artists English transformed itself into a simpler, less inflected and extremely flexible medium of universal communication. It is not too much to hope that a similar process will be set on foot with the minimum of modification, Sanskrit will again play the role which it is fitted to discharge by reason of the comprehensiveness of its vocabulary, the unrivalled richness of its synonims, the admitted perfection of its grammar and its adaptability to the utmost refinements of philosophic and scientific speculation and analysis and its capacity to express every variety of human thought and emotion.

Is Sanskrit Dead ?
P. 3-4.

डा० कृष्णकान्त हण्डिकै

उपकुलपति, गोहाटी विश्वविद्यालय

The study of Sanskrit demands accurate knowledge and precise interpretation. Like all classical studies, it ought to be an intellectual discipline calculated to promote accuracy of thought and expression, the value of which can hardly be overestimated in the reasoned approach to the multiple problems of state and society. But the classics have also a

higher significance. In an address given to the classical association Lord Green has rightly abserved that "the service of science, whether pure or applied, cannot of itself lead to complete and happy life but, on the contrary, if followed to the exclussion of the humanities, tends to enslave the spirit and keep the eyes directed to the ground instead of raising them to the skies, for us the supreme importance of the study of Sanskrit lies in the fact that it must help us to preserve the spiritual values of our civilization and strive after a higher morality based on the ideals of Ancient Indian Culture. In a significant passage the APASTAMBA DHARMA SUTRA (1·8) for instance, inculcates the destruction of the propencities known as BHUTA DAHIYA which consume human beings, and can only be eradicated by YOGA or ethical discipline, which combats the evil and not only develops the best in human personality and character but makes for charity, avoidance of cruelty and goodwill towards all. It is by upholding such ideals that Sanskrit literature has vitalised Indian Culture, and its great lessons may yet sustain us in times of stress and strain, and help to set right the uneasy lack of balance caused by unsettled condition of life in an age of transition.

Presidential Address.
All-India Oriental Conference
Lucknow, October 1951.

श्री सी० राजगोपालाचारी

You have asked me to say what I think about Sanskrit literature and its value. To gild refined gold, to paint the lily, to throw a perfume on the violet, to smooth the ice, or add another hue unto the rainbow or with taper-light to seek the beauteous eye of heaven to garnish, is wasteful and ridiculous excess.

अ० भा० संस्कृत साहित्य सम्मेलन को प्रेषित सन्देश

श्री ओ० वी० अलगेशन,

केन्द्रीय राज्यमन्त्री, पेट्रोलियम एवं रसायन

In Sanskrit literture we have a mirror which reflectes the ancient and glorious Civilisation and Culture of India. If Sanskrit is the mother of the languages of the north, it has functioned as the foster-mother of the languages of south. It is like an inexhaustible gold mine from which you have only to dig to enrich the languages of India as a whole. They who say that Sanskrit is a dead language like ancient greece or latin do not know what they are speak. It is like a mighty banyan tree whose branches take root and themselves grow into mighty trees with the mother tree still towering over all of them.

संस्कृत विश्वपरिषद्, तिरुपति अधिवेशन १९५५

श्री बलीराम भगत

योजना मंत्री, भारत सरकार

..............इस सबसे मेरा अभिप्राय इतना है कि संस्कृत भारत की ऐसी अमूल्य निधि है कि जिसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते। हमारा राष्ट्र स्वतन्त्र है, और स्वतंत्रता ने अधिकारों के साथ जो विशेष कर्त्तव्य हमें दिये हैं उनमें संस्कृत के प्रचार, प्रसार और भारतीय संस्कृति के विकास का कार्य भी सम्मिलित है। उनके संगठन केन्द्र और राज्य की सरकारें भी संस्कृत के प्रचार क्षेत्र में कुछ कार्य कर रही हैं पर अब यह अनुभव हो रहा है कि आज पहले से कहीं अधिक संस्कृत और भारतीय संस्कृति के प्रचार की आवश्यकता है। वैज्ञानिक आविष्कारों ने विश्व को इतना अधिक चमत्कृत कर दिया है कि यह भय होने लगा है कि यह कहीं आध्यात्मिक मूल्यों से दूर न हो जायँ। हमारे देश के गौरव के आधार-स्तम्भ ही आध्यात्मिक मूल्य है। निश्चय ही विज्ञान का अपना एक महत्व है लेकिन यह उससे भी अधिक सत्य है कि विज्ञान पर अध्यात्म का अंकुश होने पर वह विशेष मंगलदायक हो सकता है। विज्ञान सत्य हो

सकता है लेकिन मानव के कल्याण मात्र में उसके प्रयोग के लिए यह अनिवार्य है कि अध्यात्म की छत्रछाया में वह फले फूले और उससे शिष्ट और सौन्दर्य रूप लेकर वह "सत्यं शिवं सुन्दरम्" के रूप में प्रस्तुत हो।

राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन

—स्मारिका से

डा० रामसुभग सिंह

केन्द्रीय कृषि मन्त्री

भारतीय सभ्यता और संस्कृति की ही तरह हिन्दी की भी संस्कृत भाषा जननी है। हिन्दी के विकास के लिए संस्कृत को भुलाया नहीं जा सकता। वस्तुतः इसके विकास के लिए संस्कृत से काफी बल लेना होगा।

जनपद हिन्दी साहित्य सम्मेलन,
जौनपुर के वार्षिकोत्सव में
अध्यक्ष पद से प्रदत्त भाषण।

श्री वी० एन० सिंह,

उपकुलपति, राँची विश्वविद्यालय

Sanskrit is the mother of most of the important Indian languages and basic foundation of our Culture.........I entirely agree with you that Sanskrit should be made one of the compulsory subjects at the secondary stage in all our Schools.

संस्कृत विश्व परिषद्, बम्बई अधिवेशन,
दिसम्बर १९६१

श्री एन० पुरुषोत्तम मल्लय

Under the present three-language formula, Sanskrit is being ignored. To neglect Sanskrit would be to neglect one of the fundamental unifying factors at India. In the Hindi speaking states like U. P. most of the children are taking

Sanskrit. But again it is the south that now ignores Sanskrit and marked deterioration of Sanskrit studies in schools may be found. It is Hindi a language completely dependant on Sanskrit that now ousts Sanskrit from the south. It becomes cultural suicide if Hindi is allowed to displace Sanskrit which contributes to the life and vitalily of all the languages of India irrespective of their origin. Sanskrit serves as a unifying force among diverse languages of India. Our Prime minister once remarked—"I would personally like as many Indians as possible to know Sanskrit which is the very basis of our foundation and culture. In Indian art, as in the Indian bodi-politic, the influence of Sanskrit has been very great. It is a fact known to all that Sanskrit plays a leading role in creating emotional integration among the people of the south and north that we are the sons and daughters of one nation, that is Bharat and hence co-related to each other. Again the age-old language of Mantra's used for Archana in temples from Kanyakumari to Kashmir is the same and that is, in Sanskit irrespective of the fact that the people are Aryans or Dravidians or of the south or of north. It is therefore the sacred duty of each and every "Bharatiya" to work for the promotion of Sanskrit.

It will be more appropriate and just, if the leaders concerned of our nation change their prejudicial attitude towards their mother Sanskrit and work for the uplift of Sanskrit by introducing it as a compulsory language in the curriculum of studies in our schools and colleges along with Hindi as a subsidian to it or with the regional language of a state. This will eventually lead to keeping up the national integrity of Bharat and help to preserve unity in diversity by bridging the Gulf between diverse languages and cultures of Bharat.

Golden Jubilee Souvenir
Shri Rama Varma Sanskrit College
Tripunithura, (Keral)

प्रो० एम० हिरियन्ना
मैसूर

Reference for the past which is a neccessary element in patriotism spring from a proper understanding of India's past, a knowlodge of Sanskrit is essential. This aspect of the matter at least, if none other, should appeal to our young man.

Sanskrit studies
P. 63

श्री पी० वी० राघवेन्द्र राव
सम्पादक—मालवीय साहित्य मण्डली, नेल्लूर आन्ध्र

In the past our culture flourished through the Sanskrit language. So today it is necessary to give protection for Sanskrit language to have lively contact with onr culture... ...

It is misconceived by many that Sanskrit is the most difficult language to learn. But English is not less difficult than Sanskrit. Yet we are learning it with much effort. If we devote half of that effort towards Sanskrit, we can get good knowledge in it. We discard our own language saying that it is difficult. But such foreigners as the Germans are learning our language and are becoming scholars in it. It is nothing less than disgraceful to call ouerselves educated and cultured without knowing even the alphabet of the language of our national culture.

One day or other people will realise that our national language is Sanskrit and it should be given due place. It is the sacred duty of every educated citizen of India to study Sanskrit and imbibe its culture. So it is necessary for every student in Bharat to learn Sanskrit to become really cultured.

श्रीं मदनमोहनमालवीय साहित्य मण्डली
प्रकाशनम

श्री सुब्बारायन्

केन्द्रीय यातायात मन्त्री

Sanskrit is the fauntain-head of almost all the Indian languages and, in fact, it is hard to think of Indian culture without Sanskrit. All that is the best about the ancient past, religious, sociological and philosophical, is treasured in books written in Sanskrit. Therefore, ***it is essential for the enrichment of Indian Culture that the study of Sanskrit should be encouraged.***

अभिज्ञान (मुखपत्र)

विन्ध्य प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन

अपने घर की सम्पत्ति का लेखा-जोखा लिये विना बाहर से मनमाने तौर पर उधार लेना अत्यन्त अविवेकपूर्ण कार्य है। बाहर के आयात पर मुखापेक्षी बन जाने से हम कितने दीन-हीन और क्षुद्र बन जाते हैं यह हम अन्दाज नहीं लगा सकते। इस उपहासास्पद स्थिति का इलाज दूसरे शब्दों में है संस्कृत और संस्कृत से जुड़े हुए भारतीय साहित्य का गहरा अध्ययन, स्वयं संस्कृत के माध्यम से। यहाँ यह विचारणीय और स्मरणीय है कि संस्कृत साहित्य की प्रेरणा की उपमा ग्रीक-लैटिन से नहीं दी जा सकती क्योंकि यूरोप की ग्रीक रोमन और मध्यकालीन ईसाई तथा उत्तरकालीन प्रबुद्ध सभ्यताओं के बीच दृष्टिभेद बहुत चौड़ा है। भारवर्ष में संस्कृति की धारा एक और अविच्छिन्न है। उसकी एक स्थिति दूसरे से भिन्न रहते हुए भी विरुद्ध या पृथक् नहीं है। भारत का धर्म भी विचार से अधिक आचरण से सम्बद्ध रहने के कारण उसकी जनसंस्कृति का और उसके विराट जनजीवन का अविभाज्य अङ्ग है। ऐतिहासिक दृष्टि से दोनों स्थानों के बीच यह मौलिक अन्तर बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और इसीलिये संस्कृत के अध्ययन के लिये हमारा इतना प्रबल आग्रह है कि साहित्यसर्जन के लिये जिस समग्र और विशद दृष्टि की नितान्त आवश्यकता है वह संस्कृत के अध्ययन के विना किसी भी दशा में प्राप्त नहीं हो सकती। संस्कृत न केवल भारतीय वाणी का आदि स्रोत या उद्गममात्र है प्रत्युत वह भारत के लिये शिवतत्त्व की तरह ही "रुचीनां .... पयसामर्णव इव"

जाने कितनी धाराओं, अन्तर्धाराओं, और स्रोतस्विनियों का संभार समेटने-वाला अनन्त महासागर भी है। और उस में से एक साथ दो प्रेरणाएँ निकलती हैं, एक से अनेक होने की ओर अनेक दिशाओं में जाकर फिर एक बन जाने की। उसमें उषा के प्रत्यग्र अलक्तक की लाली है तो सन्ध्या के नवल सुहाग का सिन्दूर भी है। उसकी यह पूर्णता हिन्दी के साधक के लिये कितनी मननीय और ध्येय है यह बात भी तभी हृदयगम्य की जा सकती है जब उस भाषा की निधि का स्वयं पर्यालोकन कुछ दूर तक किया जाय। हिन्दी को संस्कृत की उदारता, स्वस्थता, विशालता और उदात्तता की विरासत सम्भालनी है और हिन्दीसेवियों को भी इस लिये उसके विरासत के लिये अपने में पात्रता लानी है। यह दायित्व हमारी अधकचरी भावुकता और बुद्धिविलासिता के बूते पर नहीं वहन किया जा सका। इसके लिये धैर्य, तितिक्षा और तपस्या करनी ही पड़ेगी।

अभिज्ञान

विन्ध्य प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन का मुखपत्र

२०११ विक्रम

श्री वी० ए० रामस्वामी शास्त्री

भाषा और संस्कृति के विचार से संस्कृत की महत्ता सर्वविदित है। इस प्राचीन भाषा को स्कूल और कालेजों के शिक्षण में उचित स्थान प्राप्त होना चाहिये। हमारे देश की सांस्कृतिक भाषा संस्कृत को जो तीसरी या चौथी भाषा का स्थान दिया गया है वह सर्वथा अनुचित है।

इस लिये प्रत्येक देशभक्त का कर्तव्य है कि वह एक ऐसी शिक्षा योजना बनावे जिस से स्कूल-कालेजों के अध्ययन में वह प्रत्येक छात्र के लिये अनिवार्य हो। अध्ययन समाप्ति के पूर्व छात्र को वेदों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति, कौटिलीय अर्थशास्त्र एवं कालिदास-भवभूति की कृतियों का कुछ ज्ञान होना परमावश्यक है। श्री शंकर के दर्शन का भी उसे कुछ परिचय होना चाहिये।

अपने परिवार तथा स्वतन्त्र देश के नागरिक के रूप में सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का परिज्ञान उस छात्र को अपने कर्तव्यों का मार्ग प्रशस्त करेगा।

आज (वाराणसी)

११ नवम्बर १९

जनरल के० एम० करियप्पा

Start teaching Sanskrit in every School from the kindergarten standard upwards throughout the land compulsory — ... . By teaching Sanskrit compulsorily in every School throughout the country, in a decade or two Sanskrit can be made the national language of India. This will avoid any heart-burning or discontent over the language issue. The first thing to do immediately is to train young men and young women in thousands to teach elementary Sanskrit throughout India.

डा० लक्ष्मीनारायण सुधांशु

अध्यक्ष, विहार विधान सभा

केन्द्रीय सरकार के आग्रह से यदि हिन्दी, अंगरेजी और एक अन्य किसी प्रादेशिक भाषा को ही सर्वत्र पाठ्यक्रम में रखा जायगा, तो निश्चय ही संस्कृत का विकास रुक जायगा। संस्कृत का पठन-पाठन रुकने से भारत की सभी क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य, कला और इतिहास का ह्रास होगा। हिन्दू धर्म, दर्शन और अध्यात्म शास्त्र के चिन्तन पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। अतः भारतीय संस्कृति की रक्षा और संवर्धन के लिए संस्कृत का अध्ययन आवश्यक है। संस्कृत सभी की है। इसी लिये सभी को मिल कर संस्कृत की रक्षा का उपाय करना चाहिये।

कार्यालय के अनुरोध पर प्रेषित वक्तव्य
२ जुलाई १९६५

श्री बलवन्त राय मेहता,

मुख्य मन्त्री, गुजरात

"गीर्वाणगिरा" के नाम से प्रशंसित संस्कृत भाषा विश्व की एक अति प्राचीन व समृद्ध भाषा है। जिस प्रकार भारतीय संस्कृति, उस भाषा में लिखे गये वेदों, उपनिषदों, गीता, महाभारत, रामायण, स्मृतियों, पुराणों और दर्शन ग्रन्थों पर निर्भर है, ठीक उसी प्रकार उत्तर मध्य भारत की

आज की प्रदेश-भाषाओं की वह उद्भव-गंगोत्री या आदि-जननी भी है। आज के कलि-आक्रान्त विश्व की शान्ति व कल्याण का संदेश अकेला भारत ही जिस आधार पर दे सकता है, उस भारतीय संस्कृति को हमारे जीवन और आचरण के चिरन्तन प्रेरणास्रोत के रूप में बनाये रखने के लिये और भारत की सभी प्रदेश-भाषाओं की पुष्टी व विकाश के लिये संस्कृत-भाषा की शिक्षा भारत के हरेक राज्य में अनिवार्य होनी चाहिये।

कार्यालय के अनुरोध पर प्रेषित पत्र से
८ सितम्बर १९६५

श्री मोहनलाल भट्ट

सचिव, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

हजारों वर्ष पुरानी हमारी संस्कृति तथा ज्ञान, संस्कृत भाषा के द्वारा ही आजतक सुरक्षित रखे गये हैं। संस्कृत का अध्ययन किये बिना भारत को—भारत की सामाजिक संस्कृति के मर्म को समझना कभी सम्भव नहीं। पाठशालाओं में अंग्रेजी की शिक्षा अनिवार्य होने के कारण भारतीय बालकों को सस्कृत की कामचलाऊ शिक्षा प्राप्त करने का भी अवसर नहीं मिलता है यह हमारे देश का बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। हमें अपनी प्राचीन संस्कृति तथा काल-गति से निर्मित हुए सर्वथा मौलिक व्यक्तित्व की रक्षा तथा भविष्य में भी उसके निरन्तर विकास और सम्पुष्टि के लिये वर्तमान शिक्षा-पद्धति को तत्काल बदल देना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। राजकीय दृष्टि से हमारा देश हजारों वर्ष टुकड़ों-टुकड़ों में बँटा हुआ और पराधीन रहा, फिर भी आसेतु हिमाचल उसकी संस्कृति एक और अखण्ड बनी रही और उसका ज्ञान भण्डार सारे संसार पर गहरा प्रभाव डालता रहा, यह संस्कृत भाषा का ही वरद प्रताप और प्रभाव है। हम उसके ऋण से .... जिसे हमारे पूर्वज ऋषि ऋण-कहते हैं ... . कभी मुक्त नहीं हो सकते, पर उसकी जितनी भी सेवा हमसे हो सके, करना हमारा धर्म है।

कार्यालय के अनुरोध पर प्रेषित वक्तव्य
२१-९-६५

डा० एन० के० देवराज

काशी हिन्दू-विश्वविद्यालय

Sanskrit is the cultural lingua franca of this country. It can be used as a powerful weapon for fighting disruptive forces and as an instrument of the promotion of emotional integration and unity of the people. The best way to promote such unity is to acquaint Indian peoples with the greatness and grandness of India's cultural past as enshrined in Sanskrit and to inspire them with the vision of a still greater India to be built up by their efforts, in different spheres, spiritual and material.

कार्यालय के अनुरोध पर प्रेषित वक्तव्य
१३-१०-१९६५

प्रो० वी० के० आर० वी० राव,

सदस्य, योजना आयोग

One of the essential purposes of education is to make the coming generation familiar with the Nation's cultural and religious heritage. Though there is a variety of cultural pattarns in our country, Sanskrit provides a basic thread which links them together. It is therefore important to encourage the study of Sanskrit. Whether this can be done by a modification of the 3-language formula is however a political question. All that I can say is what in the fourth plan we are proposing to lay great emphasis on the promotion of study and research in Sanskrit.

कार्यालय के अनुरोध पर प्रेषित वक्तव्य
१४-१०-६५

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार,

सम्पादक—कल्याण, गोरखपुर

संस्कृत से रहित भारत की या भारतीय जीवन की तो मैं कल्पना ही नहीं कर सकता। मूल की अवहेलना करके क्या वृक्ष खड़ा रह सकता है या पत्ते हरे रह सकते हैं? किसी राष्ट्र के जीवन का निर्माण पचीस या पचास साल में नहीं होता। अनेक शताब्दियों, अपितु सहस्राब्दियों के बाद राष्ट्र का स्वरूप निखरता है। भारतीय जीवन की धारा का आदि स्रोत वैदिक युग है। उस युग में या उस युग तक तो विश्व के किसी कोने में किसी सभ्यता या संस्कृति का उन्मेष ही नहीं हुआ था। भारतीय जीवन की धारा प्राचीनतम होने के साथ-साथ अपरिसीम शक्ति से समन्वित है। आरम्भ से लेकर आज तक विभिन्न काल में विभिन्न प्रकार के आघातों को सहने के उपरान्त भी धारा की अखण्डता बनी रही। भारतीय जीवन को अपरिसीम शक्ति से समन्वित करने का श्रेय संस्कृत भाषा और साहित्य को है, जिसने आध्यात्मिक, नैतिक, साहित्यिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि अनेक दृष्टियों से भारतीय जीवन को प्रेरणा दी है और सप्राण बनाया है। सदा की भाँति आज भी संस्कृत भाषा और साहित्य हमें प्रेरणा दे रही है। संस्कृत की अवहेलना का अर्थ होगा अखण्डता को खण्ड-खण्ड करना, शक्ति के स्रोत को बन्द करना, अपितु भारतीय जीवन के लिये चिता का निर्माण करना। प्रादेशिक और आधुनिक भाषाओं को महत्त्व अवश्य दें, उनके विकास के लिये अधिकाधिक प्रयास करें, किन्तु यह कार्य भी तब तक सम्पन्न नहीं होगा, जब तक कि संस्कृत भाषा और साहित्य को भारतीय जीवन में समुचित स्थान नहीं मिलेगा। वर्तमान भाषाओं के साथ-साथ संस्कृत के अध्ययनाध्यापन को, संस्कृत के प्रचार की आवश्यकता अनिवार्य है। मुझे प्रसन्नता है कि "सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय वाराणसी" इस दिशा में सचेष्ट है। संस्था के प्रयास की सफलता की मैं कामना करता हूँ।

कार्यालय के अनुरोध पर प्रेषित वक्तव्य
१०-११-१९६५

श्री मुहम्मद अली करीम भाई छागला,

केन्द्रीय शिक्षामन्त्री

(A plea for the Sanskrit Education in the three-language formula.)

Education minister Chagla said here to day that a place must be found for Sanskrit in the scope of the three-language formula.

Addressing the first meeting of the reconstituted central Sanskrit board here, Mr. Chagla said it seemed to him a practical idea that Sanskrit should be introduced in the curriculum after the student had put in five or six years in a school.

By that time the student would have got a fair grasp of the mother-tongue and it should be possible to lessen the stress on it and find a place for the study of Sanskrit also, he added.

Mr. Chagla made it clear he was not advocating that the study of mother-tangue be given up. All he wanted was that Sanskrit should be studied along with the mother-tangue after the fifth or the sixth year at the school.

The minister said that Sanskrit was the mother of most of the Indian languages and was the repository of the finest aspects of this country's culture, history, and tradition. This made it extremely important to provide for the study of this classical language.

He did not agree with the "modernists" who thought the study of classics was waste. On the other hand, he regarded classics as a bond between the past and the present, the study of classics helps as keep our roots in the soils of the country and it is a source from which fresh inspiration can be drawn for the future.

There must be a continuity between the psat, the present

and the future of any country, that continuity was provided by classics, the minister said.

Northern India Patrika
21-11-1965.

श्री मुहम्मद अली करीम भाई छागला,
केन्द्रीय शिक्षामन्त्री

(त्रिभाषा योजना में संस्कृत को स्थान देने के सम्बन्ध में वक्तव्य)

केन्द्रीय शिक्षामन्त्री श्री मुहम्मद करीम भाई छागला ने आज यहाँ कहा कि त्रिभाषी फार्मूले के अन्तर्गत संस्कृत को अवश्य स्थान दिया जाना चाहिये ।

यहाँ पुनर्गठित केन्द्रीय संस्कृत बोर्ड की पहली बैठक में उन्होंने कहा कि स्कूलों में छात्रों का ५ या ६ वर्ष व्यतीत हो जाने के उपरान्त मेरी समझ से उनके पाठ्यक्रम में संस्कृत का समावेश व्यवहार्य है । इस अवधि तक छात्र अपनी मातृभाषा से भलीभाँति परिचित हो जाते हैं ।

ऐसी दशा में उन पर कम दबाव डालते हुए उन्हें संस्कृत की शिक्षा दी जा सकती है ।

उन्होंने कहा कि मैं यह नहीं कहता कि मातृभाषा की शिक्षा न दी जाय । मैं चाहता हूँ कि मातृभाषा के साथ संस्कृत की शिक्षा दी जाय ।

शिक्षा मन्त्री ने कहा कि संस्कृत अधिकांश भारतीय भाषाओं की माँ है । संस्कृत देश के इतिहास संस्कृति और परम्परा का सर्वोत्तम संचित कोष है । ऐसी दशा में इस शास्त्रीय भाषा की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए ।

उन्होंने कहा कि मैं आधुनिक वादियों के इस विचार से सहमत नहीं हूँ कि संस्कृत की शिक्षा समय की बरबादी है । इसके अतिरिक्त संस्कृत प्राचीन और अर्वाचीन के बीच एक सेतु है । संस्कृत भाषा देश के पुरातन से हमारा सम्बन्ध जोड़ने वाली है । भविष्य के लिये हम उससे प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं, किन्तु हमें सदैव विगत की ओर ही न देखते रहना चाहिये । देश के वर्तमान भूत और भविष्यत् पर बराबर दृष्टि रखनी चाहिये ।

आज, २१-११-६५

डा० राधाकमल मुखर्जी

भूतपूर्व उपकुलपति, लखनऊ विश्वविद्यालय

संस्कृत साहित्य का अध्ययन एवं उपलब्धि करने का अर्थ है ग्लानि से मुक्ति एवं मानवात्मा का सान्निध्य लाभ। व्यास और वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति तथा भास और जयदेव भिन्न-भिन्न देशों के निवासी और भिन्न भिन्न संस्कृतियों के अनुगामी मनुष्यों को शान्ति एवं पवित्रता प्रदान करते हैं। बहुविध कालजयी धारणाओं तथा प्रतीकों से पूर्ण भारतीय शिल्प के समान ही संस्कृत साहित्य भी अपने नानाविध रूपों तथा चित्रों के सम्भार से दक्षिण-पूर्व तथा पूर्व एशिया के मानवसमाज में युग-युग से धार्मिकता का बोध, नम्रता एवं करुणा का भाव जागरूक रखता आया है। अपरञ्च, संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति के मूल्यबोध एवं आदर्शों के परिवाहक के रूप में विख्यात पौराणिक कथा-उपाख्यानों का भी आधार है। अंग्रेजी जिस प्रकार भारतीय मन के सम्मुख आधुनिकता का द्वार खोल देती है उसी प्रकार संस्कृत भारतात्मा के विपुल एवं व्यापक रूप का परिचय खोल कर रख देती है।

भारतीय शिक्षा ओ संस्कृतिर आदर्श (बंगला)
पृ० १४४

श्री मौलाना अबुल कलाम अजाद

This language (Sanskrit) contains India's ancient philosophy and her literature, therefore it is necessary that special arrangements should be made to teach this language so that we should have more and more of its scholars.

अ० भा० संस्कृत साहित्य सम्मेलन को
प्रेषित सन्देश

श्री हरिभाऊ उपाध्याय

अध्यक्ष, राजस्थानी साहित्य एकेडमी

हम चाहते हैं कि समाज में चारित्रिक बल, नैतिक उत्थान, सादा जीवन और उच्च विचारों के लिये जितना सम्भव हो, संस्कृत का घर-घर में प्रचार हो। मैं समझता हूँ कि अधिकांश भारतीयों को किसी न किसी रूप में संस्कृत का थोड़ा बहुत ज्ञान अवश्य होता है। भारतीय षोड़श संस्कारों का सम्बन्ध हम से है और संस्कारों को करने का सम्बन्ध संस्कृत से है। संस्कृत हमें पूर्वजों से विरासत में प्राप्त हुई है। उसका विकाश हमारा नैतिक दायित्व है।

राजस्थान संस्कृत साहित्य सम्मेलन-स्मारिका
जनवरी-फरवरी १९६४

श्री आनन्दराम बरुआ

आई० सी० एस०, आसाम प्रदेश

To me, Sanskrit is dearer than any other language. Its music has charms which no words can express. Its capability of representing every form of human thought in most appropriate language is probably not rivalled, certainly not surpassed by any other language. Most touching scences have been drawn in heart-rending words. Most terrific pictures have been couched in terror-producing expressions.

Bhavabhuti and his place in
Sanskrit literature.
P. 61

श्री रामकृष्ण मिशन,
बेल्लूर मठ, कलकत्ता.

There is no gain saying the fact that Sanskrit, with its vast literature dealing with every phase of our national life, is a veritable storehouse of knowledge bequeathed to us as a precious legacy by our ancestors. We must, therefore, understand, first of all that Sanskrit studies furnish us with the key to a deeper understanding of our culture and traditions, our ways of life, our religious practices, our spiritual realisations, in fact, our own selves. But it was very unfortunate for the country that in the early part of the British rule, when Macaulay's scheme of English education was introduced, Sanskrit studies were pushed to the background and lived only as an outmoded pursuit for some enthusiasts. Macaulay's famous minute, however, had a tremendous success, in as much as it converted the bulk of the intelligentsia of society to the new creed. The adherents of English education ran after an alien culture and thus became oblivious of their age long heritage. The result was a sort of hybrid growth among the so-called enlightened ones.

It is an unassailable fact that the medium of instruction greatly influences the pupils' taste and character. English as a medium of instruction in our country has made our youths "English in taste, in language, in morals and in intellect" This has spelt disaster for the country, for it is deterring our progress as a self-conscious people.

A plan of national education, therefore, demands an adequate appraisal of that national language which enshrines

the precious fruits of lives spent in the pursuits of knowledge in its diverse forms. Again, Sanskrit is the ancient universal cultural language of India and as such a very good cementing force. It is true that we should move with the times, imbibe what is good in other countries and thus adapt ourselves to the changes that have come over a progressive world. But in doing so we must not cut ourselves off from the old moorings that have sustained us and preserved our integrity through countless vicissitudes. It is not sufficient to sing the glories of our past heritage, but it must be studied and woven into the texture of life, individual and collective. A careful study of Sanskrit alone will bring us into direct contact with what is stored up in our national history, culture and literature.

It may be argued that the precious gems that are embedded in Sanskrit may be brought out and scattered among the masses in a manner that they may understand and appreciate them ; that . the Sanskrit literature should be translated into vernaculars and made popular among all classes of people. It is true that such steps are most welcome and serve a useful purpose, but this is not all. To us Sanskrit has more essential to our mother tongue than Greek or Latin is to English ; it is our classical language, parent or grand-parent of all vernaculars, which remain incomplete without a knowledge of Sanskrit. All may not become scholars in Sanskrit, but it is incumbent upon all to know something of it in order that they may understand their mother tongue better and keep themselves in touch with the fountainhead of their life. This wonderful language has been inextricably linked up with the people's lives in thousand and one ways

for centuries. It is therefore, idle to think that we can at any time do away with Sanskrit.

Swami Vivekananda, though aware of the difficulty inherent in learning Sanskrit, was emphatic about the spread of Sanskrit education even among the masses. With the study of Sanskrit go prestige and culture, which alone can bestow on our masses that confidence which is pre-requisite for all their progress in life. Thus alone can they conserve the cultural ideas and ideals taught to them, and rise higher in social status, which is so urgently needed for them. It is a very happy augury that with the attainment of political freedom a change in the national outlook has already come over the country. There is a genuine desire at least among certain influential sections to preserve and perpetuate our ancient civilization and culture. This has given an impetus to the spread of Sanskrit learning all over the country, and various institutions on this line are coming up everywhere. Even the State Governments have turned their attention in this direction. The expenditure on this branch of education by the West Bengal Government, for example, has gone up very much during the last few years. and it is hoped that they will spend more and more in near future.

It is, however, a dismal discovery that Sanskrit equcation available in the Pathasalas and the universities is much below the mark. The attitude of the general public towards Sanskrit learning is not encouraging. It is, therefore, feared that any amount of Government help alone in the form of grants, stipends and scholarships cannot sustain such learning for a

long time. There must be a thorough understanding of its utility by the people and a genuine demand for it.

From the memorandum to the
Sanskrit commission 1956.

श्री गुलाम मुहम्मद सादिक

मुख्यमन्त्री, जम्मू-कश्मीर स्टेट

यहाँ (कश्मीर में) मुसलमानों ने संस्कृत की प्रशंसनीय सेवा की है। कश्मीर का सुप्रसिद्ध नरेश बड्डशाह, जो १५वीं शताब्दी में हुआ, वह अपना समस्त कार्य फारसी और संस्कृत दोनों में करता था। आज भी पुराने रेकर्ड में बड्डशाह के संस्कृत में लिखे खरीते पड़े हैं। इसी प्रकार कितने ही अन्य मुसलमानों का सस्कृत प्रेम और उसके प्रति जो आदर था, उसका प्रमाण भी हमारे सामने है। आज भी आप कश्मीर में खानगाहों में जाकर देखें, वहाँ फारसी में भी शेर लिखे हैं और संस्कृत में भी। कितने ही पट्टे हमें संस्कृत में लिखे मिलते हैं।

हमारे पूर्वजों ने संस्कृत के प्रति जिस उदारता से काम लिया है, आज हम उतने संकीर्ण हो गये हैं और भाषा को मजहब की लपेट में लेकर अपनी संकीर्णता और कटुता का परिचय दे रहे हैं।

जम्मू-कश्मीर की विधान सभा में प्रदत्त भाषण
११ मार्च १९६५, आज.

प्रो० वेट्टी हेमन (लन्डन)

कोलम्बो विश्वविद्यालय, प्राध्यापिका

......and now a last point—a refutation of an argument which could be brought against the study of Sanskrit, one could say, granted that such idea can be found in the Sanskrit

texts; but why should we learn such a complicated ancient and dead language? Can we not get the same benefit from reading instead the many translations of Sanskrit texts made in modern languages?

Firstly, is Sanskrit actually a dead language? True, it is spoken only by learned Pandits of India in its original forms but it is still alive in all its offsprings, the vernaculars. Furthermore, it has never become a dead language in the sense that it employs abstract, artificially fixed forms and expressions. It is functionally alive like nature itself, which provided for Sanskrit, thought and its linguistic form the inspiring model.

As to the second point the complicated and as such apparently more difficult forms of Sanskrit the lucidity of Sanskrit formation in verbal stem, suffixes and prefixes provides a methodical help for learning this language easier than those which are less clear in their anatomical structure. Intensive study of the meaning implied in the prefixes and suffixes and the clearly indicated method of deriving all secondary forms their respective verbal roots, enable the Sanskrit student, in a way, to produce the various combinations himself. Furthermore it is just that manifoldness of the primitively rich Sanskrit that provides the linguists with the best study-model of all languages especially those modern ones in which structure is less diernible for their forms are as it were, mutilated. As to the question of representing Sanskrit in modern translation, its richness of thought and forms can not be reproduced in languages of later limited formation.

Secondly, as mentioned above all its irrational and acoustic implication cannot be transferred into a language of less acute sound preception.

And thirdly, all translations are, as the very name suggests, only transformations and subjective interpretation of the translator concerned. Thus none of them can provide an objective on full representation of the original again Sanskrit is near to the foundation of thought and inguistic expression of the whole Indo European language group. As such Sanskrit can not be exhausted in its inner wealth by a translation into any of its later, and as it were, deformed sister or daughter languages.

From the all above given aspects and reasons the claim can be upheld that the study of Sanskrit is an essential and the most fruitful task.

Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute
July October 1947

सहायक-नामावलि

संस्कृत विश्वविद्यालय

श्री पं०	बलदेव उपाध्याय	अध्यक्ष अनुसन्धान विभाग,	वाराणसी	१५-००
,,	भगवत्प्रसाद मिश्र	वेदविभाग	,,	११-००
,,	रामकुबेर मालवीय	साहित्य विभाग	,,	११-००
,,	बदरीनाथ शुक्ल	न्याय वैशेषिक विभाग	,,	११-००
,,	जगन्नाथ उपाध्याय	बौद्ध विभाग	,,	११-००
,,	अवधविहारी त्रिपाठी	ज्यौतिष विभाग	,,	१०-००
,,	मुरलीधर मिश्र	व्याकरण विभाग	,,	१०-००
,,	रामप्रसाद त्रिपाठी	प्राचीन व्याकरण विभाग	,,	१०-००
,,	प्रेमवल्लभ त्रिपाठी	धर्मशास्त्र विभाग	,,	१०-००
,,	हरिराम शुक्ल	सांख्य योग विभाग	,,	१०-००
,,	करुणापति त्रिपाठी	शिक्षा शास्त्र विभाग	,,	१०-००
,,	लक्ष्मीनारायण तिरपाठी	पाली विभाग	,,	५-००
डा० श्री	शम्भुनाथ सिंह	हिन्दी विभाग	,,	५-००

श्री पं०	सुरेन्द्रनाथ शास्त्री	व्याख्याता न्याय विभाग	,,	११-००
,,	भूपेन्द्रपति त्रिपाठी	व्याकरण विभाग	,,	१०-००
,,	मीठालाल ओझा	ज्यौतिष विभाग	,,	५-००
,,	वासुदेव मिश्र	व्याकरण विभाग	,,	५-००
,,	श्री राम पाण्डेय	दर्शन विभाग	,,	५-००
,,	विभूतिनाथ त्रिपाठी	न्याय विभाग	,,	५-००
,,	सत्यनारायण मिश्र	वेदान्त विभाग	,,	५-००
,,	महादेवोपाध्याय	साहित्य विभाग	,,	५-००
,,	अमृतलाल जैन	जैनदर्शन विभाग	,,	५-००
,,	द्विजेन्द्रनाथ मिश्र	साहित्य विभाग	,,	५-००
,,	चन्द्रवली द्विवेदी	प्राचीन व्याकरण विभाग	,,	५-००
,,	रमाशंकर पाण्डेय	हिन्दी विभाग	,,	५-००

संस्कृत परिषद्, सागर विश्वविद्यालय, सागर	१००-००
श्री मौनी हरिसेवक दास, व्यवस्थापक, संस्कृत प्रचार विभाग, श्री वैकुण्ठनाथ पवहारी संस्कृत महाविद्यालय, वैकुण्ठपुर, देवरिया	१०१-००
संस्कृत सेवा संघ, राँची	२५-००
मातृमन्दिर (कन्या संस्कृत गुरुकुल) रामापुरा, वाराणसी	२५-००
श्री श्रीनिवास हिम्मत सिंहका, सूजागंज, भागलपुर	२५-००
श्री पण्डित बद्रीनाथ काशीनाथजी शास्त्री, बड़ौदा	२५-००
संस्कृत परिषद्, गौहाटी विश्वविद्यालय, गौहाटी	२०-००
श्री यज्ञशाला संस्कृत विद्यालय, मठिया पो० तरकुलवा, देवरिया	१५-००
श्री काशी विद्यामन्दिर, मिश्रपोखरा, वाराणसी	११-००
श्री पं० विश्वनाथ मिश्र, आचार्य, शार्दूल ब्रह्मचर्याश्रम, बीकानेर	११-००
कामरूप संस्कृत संजीवनी सभा, नलेवाडी जि० कामरूप, असम	११-००
संस्कृत संसद्, पुराना कानपुर, कानपुर	१०-००
श्री पं० ताराशंकर मिश्र वैद्य, मन्त्री, विश्व संस्कृत परिषद्, अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय, वाराणसी	१०-००
प्रबन्धक, श्री दयालु संस्कृत विद्यालय, बासफाटक, वाराणसी	१०-००

★